

बिहार राज्य एवं अन्य

बनाम

बिहार राज्य एम.एस.ई.एस.के.के. महासंघ एवं अन्य

12 अक्टूबर, 2004

[वाई. के. सभरवाल एवं डी. एम. धर्माधिकाधारी, न्यायमूर्तिगण]

सेवा कानून अवशोषण - विभिन्न विश्वविद्यालयों से संबद्ध महाविद्यालयों को 1976 के अधिनियम के तहत घटक महाविद्यालयों के रूप में अधिगृहीत किया गया - विश्वविद्यालय का अधिकार क्षेत्र राज्य सरकार के संबंध में संबद्ध महाविद्यालयों में नियुक्तियों की वैधता पर निर्णय लेने एवं उन नियुक्तियों का घटक महाविद्यालयों में आमेलन - अभिनिर्धारित: सामान्य परिस्थितियों में संबद्ध महाविद्यालयों में नियुक्तियाँ धारा 35 के अनुसार राज्य सरकार के पूर्व अनुमोदन से होनी चाहिए - लेकिन अधिगृहीत संस्थानों के कर्मचारियों के आमेलन का विषय धारा 4 (1) (14) के अनुसार संबंधित विश्वविद्यालय के अनन्य अधिकार क्षेत्र में होगा - इस मामले में, धारा 35 विश्वविद्यालय की शक्ति पर कोई बाधा नहीं है धारा 4 (1) (14) एवं धारा 35 के प्रावधानों के बीच कोई संघर्ष नहीं है, यद्यपि प्रत्येक में एक गैर-बाधक खंड शामिल है - दोनों प्रावधान दो अलग-अलग स्थितियों एवं क्षेत्रों में संचालित होने का इरादा रखते हैं, इसलिए, एक-दूसरे पर हावी होते हैं क्षेत्र प्रत्येक को विशेष रूप से सौंपा गया - बिहार राज्य विश्वविद्यालय अधिनियम, 1976 - धारा 4 (1) (14) एवं 35 - परिनियमों की व्याख्या - सामंजस्यपूर्ण निर्माण - आवश्यकता - एक ही अधिनियम में दो प्रावधानों के मामले में, जिनमें से प्रत्येक में एक गैर-बाधक खंड शामिल है।

भारत का संविधान, 1950 - अनुच्छेद 166 - राज्य सरकार का आदेश राज्यपाल के नाम से औपचारिक रूप से व्यक्त नहीं किया गया - राज्य द्वारा स्वयं को चुनौती - वैधता - मान्य नहीं - राज्य उस निर्णय का लेखक होने के नाते, स्वयं उस निर्णय को बदलने या वापस लेने की अनुमति नहीं दी जा सकती - निर्वाचित सरकार में केवल परिवर्तन पिछली

निर्वाचित सरकार के निर्णय का अनादर करने को उचित नहीं ठहराता - यदि पिछली सरकार का निर्णय नवनिर्वाचित सरकार को स्वीकार्य नहीं था, तो वह उसे औपचारिक रूप से वापस लेने या रद्द करने के लिए स्वतंत्र थी।

क्रान्तियों की व्याख्या - गैर-बाधक खंड - दो प्रावधानों का अर्थ, उद्देश्य एवं प्रभाव, जिनमें से प्रत्येक में एक गैर-बाधक खंड शामिल है - ऐसी स्थिति में व्याख्या का तरीका - निर्णय: कोई भी स्थापित सिद्धांत लागू नहीं किया जा सकता सिवाय इसके कि दोनों प्रावधानों के उद्देश्य एवं प्रयोजन एवं प्रत्येक में प्रयुक्त भाषा का उल्लेख किया जाए - सामंजस्यपूर्ण निर्माण आवश्यक है।

विभिन्न विश्वविद्यालयों से "संबद्ध" 40 महाविद्यालयों में शिक्षण एवं गैर-शिक्षण पदों पर कार्यरत लगभग 4,000 कर्मचारियों के आमेलन से संबंधित विवाद, जिन्हें बिहार विश्वविद्यालय अधिनियम, 1976 के प्रावधानों के अनुसार "अंगठित" महाविद्यालयों के रूप में अधिग्रहित किया गया था, वर्तमान अपील में विचारार्थ आया।

उपर्युक्त "संबद्ध" महाविद्यालयों को वर्ष 1986 में बिहार सरकार द्वारा पारित संकल्प के तहत संबंधित विश्वविद्यालयों के "घटक महाविद्यालय" बनाया गया था एवं वर्ष 1987 में संबद्ध महाविद्यालयों के साथ औपचारिक समझौता करने पर संबंधित विश्वविद्यालयों द्वारा इसे लागू किया गया था। 'संबद्ध महाविद्यालय' एवं 'घटक महाविद्यालय' शब्दों को अधिनियम की धारा 2 (ग) एवं 2 (झ) में परिभाषित किया गया है। अधिनियम के प्रावधानों एवं विश्वविद्यालयों के क्रान्तियों के अनुसार विश्वविद्यालयों से मान्यता प्राप्त एवं विशेषाधिकार प्राप्त करने वाले प्रत्येक संस्थान को 'संबद्ध महाविद्यालय' कहा जाता है, जबकि 'घटक महाविद्यालय' का अर्थ विश्वविद्यालय द्वारा स्वयं संचालित एवं नियंत्रित शिक्षण संस्थान है।

उच्च न्यायालय ने अपने आक्षेपित निर्णय में कहा कि अधिनियम की धारा 4(1)(14) के अनुसार, संबंधित विश्वविद्यालय स्वयं संबद्ध महाविद्यालयों में नियुक्तियों की वैधता एवं उन नियुक्तियों के संघटक महाविद्यालयों में समामेलन से संबंधित विवादों पर निर्णय लेने के लिए

अधिकृत हैं; एवं धारा 4(1)(14) के परंतुक में निहित गैर-बाधा खंड के मद्देनजर, धारा 35 में निहित बाध्यताएँ, जो संबद्ध महाविद्यालयों में पदों के सृजन एवं नियुक्ति के लिए राज्य सरकार की पूर्व स्वीकृति प्रदान करने का प्रावधान करती हैं, संबद्ध महाविद्यालयों के मौजूदा कर्मचारियों के समामेलन पर लागू नहीं होंगी, जिन्हें विश्वविद्यालयों द्वारा संघटक महाविद्यालयों के रूप में परिवर्तित होने पर अधिग्रहित किया जाता है।

उच्च न्यायालय ने राज्य के इस तर्क को खारिज कर दिया कि केवल उसे ही पूर्व संबद्ध महाविद्यालयों के केवल उन्हीं कर्मचारियों की पहचान एवं उनके समामेलन पर विचार करने के लिए सतर्कता जाँच सहित जाँच स्थापित करने का अधिकार है, जिन्हें राज्य सरकार के पूर्व अनुमोदन से विधिवत नियुक्त किया गया था। फलस्वरूप, कर्मचारी महासंघ द्वारा दायर रिट याचिकाओं को स्वीकार करते हुए, न्यायालय ने विश्वविद्यालयों को धारा 4(1)(14) के अनुसार संबद्ध महाविद्यालयों के मौजूदा कर्मचारियों के समामेलन पर विचार करने एवं कदम उठाने का निर्देश देते हुए एक विनिर्दिष्ट आदेश जारी की।

राज्य सरकार द्वारा इस न्यायालय में अपील करने पर, इसने न्यायमूर्ति श्री एस.सी. अग्रवाल, जो सर्वोच्च न्यायालय के पूर्व न्यायाधीश थे, को एक सदस्यीय आयोग के रूप में नियुक्त किया। इस आयोग को पूर्ववर्ती संबद्ध महाविद्यालयों के कर्मचारियों को परिवर्तित घटक महाविद्यालयों की सेवाओं में समाहित करने से संबंधित विभिन्न विवादों एवं मतभेदों की जांच करने का कार्य सौंपा गया। इस आयोग ने एक विस्तृत प्रतिवेदन प्रस्तुत की।

अपील, एवं उससे जुड़ी विशेष अनुमति याचिका एवं अवमानना याचिकाओं को खारिज करते हुए, न्यायालय ने

निर्णय: 1.1. एक गैर-बाधा खंड सामान्यतः किसी धारा में इस उद्देश्य से जोड़ा जाता है कि धारा के अधिनियमित भाग को, विरोध की स्थिति में, गैर-बाधा खंड में उल्लिखित उसी या अन्य अधिनियम के प्रावधान पर अधिभावी प्रभाव प्रदान किया जा सके। यह कहने के समतुल्य है कि गैर-बाधा खंड में उल्लिखित प्रावधानों या अधिनियम के बावजूद, उसके बाद

का प्रावधान पूर्ण रूप से लागू रहेगा या गैर-बाधा खंड में शामिल प्रावधान उस अधिनियम या उस प्रावधान के संचालन में बाधा नहीं बनेंगे जिसमें गैर-बाधा खंड आता है।

[401-जी, एच; 402-ए]

'वैधानिक व्याख्या के सिद्धांत', न्यायमूर्ति जी.पी. सिंह द्वारा 9 वां संस्करण - अध्याय IV, सारांश IV पृष्ठ 318 एवं 319, संदर्भित।

1.2. जब दो या दो से अधिक कानून या प्रावधान एक ही क्षेत्र में लागू होते हैं एवं प्रत्येक में एक गैर-बाधक खंड होता है जो यह बताता है कि उसका प्रावधान किसी अन्य प्रावधान या कानून के प्रावधानों को अधिरोहित करेगा, तो व्याख्या की उत्तेजक एवं जटिल समस्याएँ उत्पन्न होती हैं। व्याख्या की ऐसी समस्याओं को हल करने में, गैर-बाधक खंड वाले दो प्रावधानों में से प्रत्येक के उद्देश्य एवं प्रयोजन का उल्लेख करने के अलावा कोई भी स्थापित सिद्धांत लागू नहीं किया जा सकता है। एक ही अधिनियम के दो प्रावधानों, जिनमें से प्रत्येक में एक गैर-बाधक खंड है, के लिए एक ही अधिनियम के दो परस्पर विरोधी प्रतीत होने वाले प्रावधानों की सामंजस्यपूर्ण व्याख्या आवश्यक है। इस कठिन अभ्यास में, दो प्रावधानों के उद्देश्य एवं प्रयोजन एवं प्रत्येक में प्रयुक्त भाषा को प्रभावी बनाने पर उचित विचार करना शामिल है। [402-बी, सी]

श्री स्वर्ण सिंह एवं अन्य. बनाम श्री कस्तूरी लाल, [1977] 1 एससीसी 750, पर भरोसा।

1.3. हालाँकि, गैर-बाधा खंडों को हमेशा न तो निरस्त करने वाले खंड माना जाना चाहिए एवं न ही ऐसे खंड जो स्पष्ट रूप से या पूरी तरह से कानून के किसी अन्य प्रावधान का स्थान लेते हैं, बल्कि केवल ऐसे खंड माने जाने चाहिए जो उन सभी बाधाओं को दूर करते हैं जो किसी अन्य कानून के प्रावधानों से उत्पन्न हो सकती हैं, जो उस मुख्य अधिनियमन प्रावधान के संचालन के रास्ते में आती हैं जिससे गैर-बाधा खंड जुड़ा हुआ है। [402-ई, एफ]

बिपथुम्मा एवं अन्य बनाम मरियम बीबी, (1966) 1 मैसूर लॉ जर्नल 162 एवं 165, अनुमोदित।

2.1. धारा 4(1)(14) एवं धारा 35 के प्रावधानों में कोई विरोधाभास नहीं है, हालाँकि प्रत्येक में एक *गैर-बाधक* खंड शामिल है। ये दोनों एक-दूसरे को विशेष रूप से सौंपे गए क्षेत्र में एक-दूसरे को दरकिनार करने का इरादा रखते हैं। सामान्य परिस्थितियों में, संबद्ध महाविद्यालयों में नियुक्तियाँ धारा 35 के अनुसार राज्य सरकार के पूर्व अनुमोदन से होनी चाहिए, लेकिन कर्मचारियों की सेवाओं के आमेदन का विषय अधिनियम की धारा 4(1)(14) के अनुसार संबंधित विश्वविद्यालय के अनन्य अधिकार क्षेत्र में होगा। [404-एफ, जी]

2.2. धारा 35 सभी 'संबद्ध महाविद्यालयों' पर लागू होती है, लेकिन उस स्थिति को कवर नहीं करती जब किसी 'संबद्ध महाविद्यालय' को राज्य सरकार की मंजूरी या प्रस्ताव पर विश्वविद्यालय द्वारा 'संघटक महाविद्यालय' के रूप में अधिग्रहित करने का प्रस्ताव हो। संपत्ति, देनदारियों एवं कर्मचारियों के साथ संबद्ध या असंबद्ध संस्थान के अधिग्रहण का विषय केवल धारा 4(1) के खंड 14 के प्रावधानों द्वारा विनियमित होता है। [403-डी]

2.3. धारा 35 की तुलना में- धारा 4(1)(14) का प्रभाव उस चरण तक सीमित है जब विश्वविद्यालय संबद्ध या असंबद्ध निजी संस्थानों के प्रबंधन या शासी निकायों के साथ उनके प्रबंधन, परिसंपत्तियों, देनदारियों एवं कर्मचारियों को अपने अधीन करने के लिए समझौता करता है। धारा 4(1)(14) में *गैर-बाधा* खंड का प्रभाव यह है कि अधिग्रहण किए जाने वाले प्रस्तावित संस्थान/कॉलेज के कर्मचारियों के आमेदन का मामला संबंधित विश्वविद्यालय की एकमात्र शक्ति एवं अधिकार क्षेत्र में होगा जिसके अधिकार क्षेत्र में संबद्ध कॉलेज या संस्थान आता है। अधिग्रहीत संस्थानों के कर्मचारियों के आमेदन के मामले में, धारा 35, जिसमें पदों के सृजन एवं नियुक्ति के लिए राज्य सरकार की पूर्व स्वीकृति या अनुमोदन की आवश्यकता होती है, विश्वविद्यालय की शक्ति पर कोई बाधा नहीं होगी। यह अलग बात है कि विश्वविद्यालय, अधिग्रहीत संस्थान के कर्मचारियों के आमेदन पर विचार करते समय, किसी

विशेष नियुक्ति की वैधता/नियमितता या अन्यथा पर उचित विचार कर सकता है, लेकिन अधिनियम की धारा 35 में परिकल्पित राज्य की पूर्व स्वीकृति या अनुमोदन के अभाव में इसमें बाधा नहीं आएगी। इस प्रकार, दोनों गैर-बाधा वाले खंडों की सामंजस्यपूर्ण रूप से व्याख्या एवं अनुप्रयोग किया जाना चाहिए ताकि प्रत्येक को अधिभावी प्रभाव दिया जा सके एवं प्रत्येक को सौंपे गए विशिष्ट क्षेत्र के भीतर उनके संचालन को प्रतिबंधित किया जा सके। सामान्य परिस्थितियों में संबद्ध महाविद्यालयों में पदों के सृजन एवं नियुक्तियों के मामले में, धारा 35 में निहित राज्य सरकार की पूर्व स्वीकृति या अनुमोदन की आवश्यकता समाप्त नहीं होती है, क्योंकि धारा 4(1)(14) में विपरीत प्रावधान निहित है एवं बाद वाली धारा विश्वविद्यालय द्वारा अधिग्रहित संस्थान के कर्मचारियों के आमेलन तक ही सीमित है।[405-ए-ई]

2.4. दो गैर-बाधा खंड, यद्यपि थोड़े अलग शब्दों में लिखे गए हैं - एक धारा 4(1) (14) के प्रावधान में एवं दूसरा अधिनियम की धारा 35 में - इस प्रकार, सामंजस्यपूर्ण ढंग से व्याख्यायित किए गए हैं। ये दो अलग-अलग क्षेत्रों में कार्य करते हैं - पहला अधिग्रहित महाविद्यालयों के कर्मचारियों के अवशोषण पर विचार करने के लिए एवं दूसरा संबद्ध महाविद्यालयों के लिए जब उनका विश्वविद्यालय द्वारा अधिग्रहण किए जाने का कोई प्रस्ताव नहीं है। दोनों प्रावधान दो अलग-अलग स्थितियों एवं क्षेत्रों में कार्य करने के लिए अभिप्रेत हैं, दोनों का एक दूसरे पर एक अधिभावी प्रभाव पड़ता है। इसीलिए विधानमंडल ने प्रत्येक में एक गैर-बाधा खंड का प्रयोग किया है। [406-ई, एफ]

3. धारा 57 ए की उप-धारा (2) का खंड (सी) अधिनियम 3, 1990 द्वारा प्रस्तुत किया गया था एवं वर्ष 1990 से पहले घटक महाविद्यालयों के रूप में ग्रहण किए गए संबद्ध महाविद्यालयों के मामलों पर इसका पूर्वव्यापी प्रभाव नहीं है। धारा 57 ए की उप-धारा (2) के उक्त खंड (सी) के लिए घटक महाविद्यालयों में परिवर्तित संबद्ध महाविद्यालयों के शिक्षकों की सेवाओं को समाहित करने से पहले बिहार राज्य विश्वविद्यालय (घटक कॉलेज) सेवा आयोग

के अनुमोदन की आवश्यकता है। उसी अधिनियम में संशोधन करने वाले बाद के कानून के उपरोक्त अंश को अधिनियम के असंशोधित प्रावधानों की व्याख्या में सहायक के रूप में लिया जा सकता है। अधिनियम के संशोधित प्रावधान इस बात का संकेत हैं कि अधिग्रहीत संबद्ध महाविद्यालयों के कर्मचारियों के आमेलन के विषय को संबद्ध महाविद्यालयों में पदों पर नियमित भर्ती से अलग विषय माना जाता है, जो अधिनियम की धारा 35 के अनुसार राज्य सरकार की पूर्व स्वीकृति या अनुमोदन से की जानी है। इसी प्रकार, 1993 के अधिनियम 17 द्वारा धारा 35 में जोड़ी गई उप-धारा (3) भी प्रत्याशित रूप से लागू है एवं इसका 1993 से पहले घटक महाविद्यालयों के रूप में लिए गए संबद्ध महाविद्यालयों के शिक्षण कर्मचारियों की सेवाओं के आमेलन पर कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ता है। उप-धारा (3) संबद्ध महाविद्यालयों के कर्मचारियों (शिक्षण या गैर-शिक्षण) की भर्ती के सामान्य तरीके पर लागू होती है एवं यह केवल इस कानूनी स्थिति की पुनरावृत्ति है कि अधिनियमों, विधियों, नियमों एवं विनियमों के प्रावधानों के विपरीत की गई नियुक्तियाँ एवं पदोन्नति अमान्य होंगी एवं किसी भी समय समाप्त की जा सकती हैं। इसमें यह भी प्रावधान है कि विश्वविद्यालय द्वारा ऐसी अवैध, अनियमित, अनधिकृत नियुक्तियों/पदोन्नतियों के विरुद्ध किए गए किसी भी व्यय की वसूली सार्वजनिक मांग के रूप में ऐसी अवैधता करने के लिए उत्तरदायी पाए गए अधिकारियों से की जाएगी। सार्वजनिक मांग वसूली अधिनियम, 1914 के प्रावधानों के अंतर्गत। वर्ष 1990 में लागू की गई धारा 57 ए (2) का खंड (सी) एवं वर्ष 1993 में लागू की गई धारा 35 की उप-धारा (3), जो भावी रूप से लागू हैं, वर्ष 1990 से पहले विद्यमान कर्मचारियों के साथ घटक महाविद्यालयों के रूप में लिए गए संबद्ध महाविद्यालयों पर लागू नहीं होंगी। वर्ष 1990 एवं 1993 में बाद में लागू किए गए वे प्रावधान, जिनका उल्लेख सीमित उद्देश्य के लिए किया गया था, दर्शाते हैं कि विधानमंडल ने संबद्ध महाविद्यालयों में शिक्षण एवं गैर-शिक्षण पदों पर राज्य सरकार की स्वीकृति से की जाने वाली सामान्य भर्ती एवं संबद्ध महाविद्यालयों में

स्वीकृत या गैर-स्वीकृत पदों पर नियुक्त मौजूदा कर्मचारियों के समामेलन के मामले को हमेशा अलग तरह से देखा है। [405-एफ-एच; 406-ए-डी]

4. जहाँ तक राज्य सरकार के उस आदेश का प्रश्न है जिसमें कर्मचारियों को समिति द्वारा स्वीकृत एवं अनुशंसित पदों पर आमेलित करने का निर्देश दिया गया है, राज्य उस निर्णय का लेखक है, केवल इसलिए कि यह संविधान के अनुच्छेद 166 के अनुसार राज्यपाल के नाम से औपचारिक रूप से व्यक्त नहीं किया गया है, राज्य को स्वयं उस निर्णय से पीछे हटने या पीछे हटने की अनुमति नहीं दी जा सकती। निर्वाचित सरकार के परिवर्तन मात्र से पिछली निर्वाचित सरकार के निर्णयों का अनादर करना उचित नहीं ठहराया जा सकता। यदि यह निर्णय नवनिर्वाचित सरकार को स्वीकार्य नहीं था, तो वह इसे औपचारिक रूप से वापस ले सकती थी या निरस्त कर सकती थी। इस निर्णय को वापस लेने या निरस्त करने के अभाव में, बिहार राज्य एवं झारखंड राज्य (बिहार राज्य के पुनर्गठन के बाद निर्मित) यह तर्क देने के लिए स्वतंत्र नहीं हैं कि यह निर्णय उन्हें बाध्य नहीं करता है। [407-जी, 408-सी, डी]

5.1. धारा 4(1)(14) एवं धारा 35 के प्रावधानों पर उच्च न्यायालय द्वारा की गई व्याख्या की सीमा तक, तथा अनुच्छेद 24 से 26 में जारी निर्देशों के अनुसार, उच्च न्यायालय के निर्णय की पुष्टि की जाती है। [410-ए]

5.2. माननीय न्यायमूर्ति एस. सी. सी. अग्रवाल [सेवानिवृत्त] के जाँच आयोग की प्रतिवेदन स्वीकार की जाती है एवं उक्त प्रतिवेदन के विरुद्ध दायर सभी आपत्तियाँ अस्वीकार की जाती हैं। [410-एच, 411-एजे]

5.3. विभिन्न संबद्ध महाविद्यालयों के कर्मचारी, जिनकी पहचान एवं सूची संख्या (i) में नाम है, स्वीकृत पदों पर नियुक्त किए गए हैं, उन्हें संयोजित किया जाएगा एवं इस आशय का औपचारिक आदेश संबंधित विश्वविद्यालयों द्वारा जारी किया जाएगा। [411-ए]

5.4. विश्वविद्यालय, आयोग की प्रतिवेदन की सूची संख्या (ii) में नामित नियुक्त व्यक्तियों के आमेलन के मामले में अधिनियम की धारा 4(1)(14) के अंतर्गत निर्णय लेंगे, जो उन पदों पर नियुक्त व्यक्ति हैं जिनके लिए विश्वविद्यालयों द्वारा राज्य सरकार के निर्णय के अनुसार कट-ऑफ तिथि तक राज्य को सिफारिशें भेजी गई थीं। [411-बी, सी]

जाँच आयोग की प्रतिवेदन की सूची सं. (ii) में नामित नियुक्तियों के आमेलन के प्रश्न पर विचार करते समय, संबंधित विश्वविद्यालय जाँच आयोग की प्रतिवेदन की विषय-वस्तु एवं इस न्यायालय के वर्तमान निर्णय पर निर्भर करेंगे।[411-डी]

5.5. सूची संख्या (iii) में उल्लिखित नियुक्त व्यक्ति, जो उन पदों पर नियुक्त हैं जिनके लिए विश्वविद्यालयों द्वारा राज्य सरकार को कट-ऑफ तिथि के बाद सिफारिशें भेजी गई थीं या वे जो उन पदों पर कार्यरत हैं जिनके लिए राज्य सरकार के अनुमोदन के लिए कोई सिफारिशें नहीं भेजी गई थीं, उन्हें आमेलन के लिए विचार किए जाने का कोई अधिकार नहीं है - चाहे उनके मामलों में अनुमोदन के लिए सिफारिशें न भेजने के मामले में आकस्मिक परिस्थितियाँ हों या अन्यथा। सूची संख्या (iii) के संबंध में जाँच आयोग की नकारात्मक प्रतिवेदन स्वीकार की जाती है एवं विश्वविद्यालयों को निर्देश दिया जाता है कि वे सूची संख्या (iii) में नामित ऐसे सभी नियुक्त व्यक्तियों को आमेलन के लिए विचार से बाहर कर दें। [411-डी-एफ]

5.6. प्रत्येक कर्मचारी की योग्यता एवं संबंधित समय पर लागू संबंधित कानून को ध्यान में रखते हुए, व्यक्तिगत मामलों में निर्णय, यदि कोई हो, शिक्षण एवं गैर-शिक्षण पदों के लिए योग्यता निर्धारित करते हुए, विश्वविद्यालयों द्वारा न्यायमूर्ति अग्रवाल आयोग की प्रतिवेदन के निष्कर्षों के आधार पर एवं ऊपर बताई गई कानूनी स्थिति के आलोक में लिया जाएगा। [411-जी, एच; 412-ए]

दीवानी अपीलीय क्षेत्राधिकार: वर्ष 1997 की दीवानी अपील संख्या 6098

पटना उच्च न्यायालय के वर्ष 1995 का सी.डब्ल्यू.जे.सी. संख्या 4021 के दिनांक
31.1.97 के निर्णय एवं आदेश से

एस.एल.पी.(सी) संख्या: 18168/2002, सी.पी.(सी) संख्या:
5,53,54,83,353,363,549,82/ 2002 एवं सी.ए. संख्या: 343,377,441/2004 के साथ।
6098/97, 1.ए.सं.102-103, 105-108, 110-113, 119, 143,146,150,154, 157, 158, 159,
173, 178, 183,188-189, 195- 198,201,203-204,212-215,224,234,236-
237,244,247,250,273,276,278- 280, 286, 293, 295,299, 303, 318, 320, 329,
332 [अभियोजन के लिए आवेदन] के साथ।

अंतर्वर्ती आवेदन संख्या 114,115, 120,121-124,145,151,160,161,164,174,177, 179,
185- 187, 190-192, 199, 202, 208, 210, 211, 216, 217, 219, 221, 222-223, 225,
226- 227, 229, 231, 233, 235, 238, 241-242, 243, 246,249, 252-255, 260,
281, 288- 289, 290-291, 294, 297-298, 302, 305-307, 311-317, 322-328, 343,
346, 347- 349, 351, 354-355, 363, 364, 367-371, 375, 377 [अनुमति के लिए
आवेदन आपत्ति दर्ज करने के लिए]

अंतर्वर्ती आवेदन संख्या 116-118, 207, 262, 283, 345, 365 [हस्तक्षेप के लिए
आवेदन]

अंतर्वर्ती आवेदन संख्या 125-142, 144, 147, 149, 152, 155, 156, 162-163,
165, 167-168, 110-112, 175, 179-182, 184, 193, 205, 239, 256, 258, 264-272,
211, 284-285, 292, 201, 308-309, 333, 360-361, 373, 374 [दिशानिर्देशों के लिए
आवेदन]

अंतर्वर्ती आवेदन सं. 353 [अभिलेख अधिवक्ता के नाम में परिवर्तन हेतु आवेदन]

अंतर्वर्ती आवेदन सं. 304 [प्रतिस्थापन हेतु], अंतर्वर्ती आवेदन सं. 275 [संशोधन
हेतु]

अंतर्वर्ती आवेदन सं. 331 [विलंब क्षमा हेतु]

अंतर्वर्ती आवेदन संख्या 357-358 [अतिरिक्त दस्तावेज दाखिल करने की अनुमति के लिए आवेदन एवं छूट]

अंतर्वर्ती आवेदन संख्या 148, 153, 166, 169, 176, 194, 200, 206, 209, 218, 220, 228, 230, 232, 240, 245, 248, 251, 257, 259, 261, 263, 274, 283, 287, 289 ए, 296, 300 [छूट के लिए आवेदन]।

बिहार राज्य के अपीलकर्ता की ओर से - राकेश द्विवेदी, बी.बी. सिंह, अखिलेश कुमार पांडे एवं अशोक कुमार पांडे।

झारखंड राज्य के अपीलकर्ता की ओर से - सी.एम.एल. वर्मा, अशोक माथुर एवं राजेश पाठक।

एस.एल.पी. में याचिकाकर्ता की ओर से - शंभू प्रसाद सिंह एवं सुश्री मंजुला गुप्ता

उत्तरदाताओं की ओर से - रंजीत कुमार, हरीश एन. साल्वे, राजू रामचन्द्रन, गोपाल सुब्रमण्यम, एल.एन. राव, ए. शरण, ए.के. श्रीवास्तव, चन्द्रशेखर, पी.एस. मिश्रा, अजीत कुमार सिन्हा, विजय कुमार सिन्हा, पंकज भगत, अशोक कुमार सिंह, साकेत सिंह, सुश्री निरंजना सिंह, शि पूजन सिंह, अभय प्रकाश सहाय, कुलदीप सिंह, पी.वी. दिनेश, संजय कु. मिश्रा, अभिषेक ठाकुर, सुश्री नूतन मिश्रा, अतुल झा, निर्मल मित्तल, नरेश कुमार, गोपाल प्रसाद, अरूप बनर्जी, डी.पी. मुखर्जी, ब्रज कु. मिश्रा, सुश्री अपर्णा झा, रंजन कुमार झा, इलिरेन दासन, मनोज स्वैम्प, अतहर आलम, अंबर कमरुद्दीन, श्रीमती एम. कमरुद्दीन, सुमित कुमार, अश्वनी भारद्वाज, एस.पी. शर्मा, अभिषेक आत्रे, शिशिर सिंह, प्रेम प्रकाश, सुश्री शर्मिला उपाध्याय, के.वी. विश्वनाथन, अतुल कु. सिन्हा, बी.रघुनाथ, देवेन्द्र सिंह, एम.पी. झा, आर.ई. रॉय, हर्षवर्द्धन झा, अनिल कु. चोपड़ा, सुनील कुमार वर्मा, अमरेश कुमार सिंह, ए.पी. माई, युगल किशोर प्रसाद, बी.एस. राजेश अग्रजीत, वरिंदर कु. शर्मा, पवन कुमार, पी. चंद्रा, अजय अमृतराज, संजीव कुमार, एन.एन. झा, पभट कुमार, अतिशी दीपांकर, राजीव सिंह, सुश्री

सुनीता आर. सिंह, टी. अनिल कुमार, राकेश कु. खन्ना, सुश्री आभा आर. शर्मा, आर.पी. सिंह, श्वेतांक शांतनु, राजीव बंसल, ए.के. घई, अम्भोज कुमार सिन्हा, नीरज शेखर, मोहन पांडे, विद्या भूषण मिश्र, आर.डी. राठौर, डॉ. कैलाश चंद, डी.के. ठाकुर, सुश्री पूनम कुमारी, संजय जैन, अजय चौधरी, राकेश उत्तमचंद्र उपाध्याय, नवीन प्रकाश, डी.के. गर्ग, महेंद्रमोहन कुमार सिंह, सुदामा एच ओझा, ए.के. तिवारी, डॉ. माया राव, आर.पी. वाधवानी, तथागत हर्ष वर्धन, श्रीमती स्वरूपा रेड्डी, उपेन्द्र मिश्र, अमिताभ चन्द्र मिश्र, ध्रुव क्र. झा, सी.डी. सिंह, एस. चन्द्रशेखर, श्रीप्रकाश सिन्हा, प्रभाष कुमार यादव, डॉ. के.एस. चौहान, एन.एस. बिष्ट, सुनील कुमार, हिमांशू शेखर, श्रवण सिंह, संजीव मल्होत्रा, मंसूर अली, इरशाद अहमद, अमित कुमार, के.एस.राणा, सतीश चंद गुप्ता, डॉ. (श्रीमती) विपीन गुप्ता, आर. नेदुमारन, राजन द्विवेदी, डी.के.सिन्हा, पी. गौर, एस.के.वर्मा, टी. महिपाल, विकाश सिंह, अमृता नारायण, प्रशांत चौधरी, सुश्री वी. मोहना, अनुपम लाल दास, मनीष वर्मा, रजनीश रंजन, मोहन पांडे, आर.पी. गोयल, सुनील कुमार, श्रीमती कीर्ति सिन्हा, श्रीमती सरला चंद्रा, कन्हैया प्रियदर्शी, कृष्णानंद पांडेया, श्रीमती. एस. उषा रेड्डी, राणा रणजीत सिंह, पी.एस. झा, अमितेश कुमार, एल.आर. सिंह, के.एन. राय, भरत संगल, मनोज स्वरूप, के.के. मोहन, अरुणाभ सुमन, विश्वजीत, अश्वनी कुमार, रंजीत कुमार, हरिशंकर, पवन कुमार, आलोक वागरेचे, मनीष सिंघवी, सौरभ अजय, पी.वी. योगेश्वरन, मनीष कुमार सरन, संतोष कुमार, चंद्रकांत नायक, राकेश के शर्मा, के.सी. बजाज, हिमांशु बजाज, अनिल कुमार झा, विजयेंद्र मिश्रा, बिनय कु. दास एवं समरेंद्र झा उनके साथ हैं।

न्यायालय का निर्णय **न्यायमूर्ति, धर्माधिकारी** द्वारा सुनाया गया:

के साथ

अंतर्वर्ती आवेदन संख्या 102-103 कंडिका अंतर्वर्ती आवेदन संख्या 105-108, 110-113, 119, 143, 146, 150, 154, 157, 158, 159, 173, 178, 183, 188-189, 195-198,

201, 203-204, 212-215, 224, 234, 236-237, 244, 247, 250, 273, 276, 278-280, 286, 293, 295, 299, 303, 318, 320, 329, 332 [अभियोग के लिए आवेदन]।

बिहार राज्य द्वारा पटना उच्च न्यायालय के दिनांक 31.1.1997 के निर्णय के विरुद्ध दायर इस अपील में, विवाद विभिन्न विश्वविद्यालयों से संबद्ध 40 महाविद्यालयों में शिक्षण एवं गैर-शिक्षण पदों पर कार्यरत लगभग 4,000 कर्मचारियों के सम्मेलन से संबंधित है, जिन्हें बिहार विश्वविद्यालय अधिनियम, 1976 के प्रावधानों के अनुसार घटक महाविद्यालयों के रूप में अधिग्रहित किया गया था। उपर्युक्त संबद्ध महाविद्यालयों को वर्ष 1986 में बिहार सरकार द्वारा पारित संकल्प के तहत संबंधित विश्वविद्यालयों के घटक महाविद्यालय बनाया गया था एवं वर्ष 1987 में संबद्ध महाविद्यालयों के साथ औपचारिक समझौते करने पर संबंधित विश्वविद्यालयों द्वारा लागू किया गया था।

इस अपील पर संबंधित विशेष अनुमति याचिका एवं अवमानना याचिकाओं के साथ निर्णय लिया जा रहा है। वर्तमान मुख्य अपील, जिसे हम मुख्य मामला मानते हैं, में हमारा निर्णय अन्य सभी संबंधित मामलों एवं मध्यवर्ती आवेदनों का निपटारा कर देगा।

हमारे लिए सभी तथ्यों एवं विवरणों पर गौर करना ज़रूरी नहीं है क्योंकि हम अपना निर्णय हमारे सामने उठाए गए कानूनी मुद्दों तक ही सीमित रखेंगे।

इन मामलों में इस न्यायालय के समक्ष उठाए गए कानूनी मुद्दों को समझने के लिए आवश्यक तथ्यात्मक पृष्ठभूमि इस प्रकार है:-

बिहार राज्य ने विभिन्न विश्वविद्यालयों के संबद्ध महाविद्यालयों को चरणबद्ध तरीके से संबंधित विश्वविद्यालयों के घटक महाविद्यालयों में परिवर्तित करने का निर्णय लिया।

'संबद्ध महाविद्यालय' एवं 'संघटक महाविद्यालय' शब्दों को बिहार राज्य विश्वविद्यालय अधिनियम, 1976 [संक्षेप में 'अधिनियम'] की धारा 2(ग) एवं 2(झ) में परिभाषित किया गया है। अधिनियम एवं विश्वविद्यालयों के कानूनों के प्रावधानों के अनुसार विश्वविद्यालयों से मान्यता प्राप्त एवं विशेषाधिकार प्राप्त करने वाले प्रत्येक संस्थान को 'संबद्ध महाविद्यालय' कहा

जाता है। 'संघटक महाविद्यालय' का अर्थ है एक शिक्षण संस्थान जिसका रखरखाव एवं नियंत्रण स्वयं विश्वविद्यालय द्वारा किया जाता है।

दिनांक 19.8.1986 के पत्र द्वारा, बिहार राज्य ने राज्य के विभिन्न विश्वविद्यालयों के सभी कुलपतियों को संलग्न सूची में उल्लिखित 36 संबद्ध महाविद्यालयों को अंगीभूत महाविद्यालयों में परिवर्तित करने के अपने निर्णय से अवगत कराया। इसी प्रकार, दिनांक 03.7.1987 के पत्र द्वारा सूचित निर्णय के तहत तीन अन्य महाविद्यालयों को भी अंगीभूत महाविद्यालयों में परिवर्तित करने का निर्णय लिया गया। एक अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्थान को भी अंगीभूत महाविद्यालय के रूप में परिवर्तित करने का निर्णय लिया गया। इस प्रकार कुल 40 संबद्ध महाविद्यालयों को अंगीभूत महाविद्यालयों में परिवर्तित करने का निर्णय लिया गया। राज्य द्वारा सूचित निर्णय में, विश्वविद्यालयों को अधिनियम की धारा 14 के प्रावधानों के अनुसार निर्देश दिया गया कि वे संबंधित विश्वविद्यालयों के अंतर्गत आने वाले विभिन्न संबद्ध महाविद्यालयों की परिसंपत्तियों एवं देनदारियों को अपने अधीन लेने के लिए एक औपचारिक प्रस्ताव पारित करें एवं उन्हें अंगीभूत महाविद्यालयों में परिवर्तित करने के उद्देश्य से उनके शासी निकायों के साथ औपचारिक समझौते करें।

राज्य सरकार के इसी निर्णय में, विश्वविद्यालयों को निर्देश दिया गया था कि वे प्रत्येक संबद्ध महाविद्यालय से महाविद्यालयों के संघटक महाविद्यालयों के रूप में कार्यभार ग्रहण करने की तिथि को स्वीकृत शिक्षण एवं गैर-शिक्षण पदों के संबंध में जानकारी प्राप्त करें एवं संबद्ध महाविद्यालयों में अतिरिक्त पदों के सृजन के प्रस्तावों के संबंध में भी जानकारी प्राप्त करें जो विश्वविद्यालयों से 30.4.1986 तक प्राप्त हुए थे एवं सरकार के पास लंबित थे। राज्य सरकार के अनुमोदन हेतु लंबित ऐसे अतिरिक्त पदों पर नियुक्त शिक्षकों की सूची भी राज्य सरकार की ओर से परिणामी कार्रवाई के उद्देश्य से अलग से तैयार करने का निर्देश दिया गया था।

विश्वविद्यालयों को स्वीकृत पदों की संख्या निर्धारित करने के लिए विभिन्न कदम उठाने के निर्देश के साथ सरकार के उपरोक्त निर्णय के परिणामस्वरूप, विश्वविद्यालयों द्वारा प्राप्त एवं अनुमोदन के लिए सरकार के पास लंबित अतिरिक्त पदों के प्रस्तावों के संबंध में, राज्य सरकार द्वारा दिनांक 12.6.1987 के पत्र द्वारा एक एवं निर्णय की सूचना दी गई। उपरोक्त अनुवर्ती निर्णय ने विभिन्न श्रेणियों के शिक्षकों एवं गैर-शिक्षण कर्मचारियों के अपने-अपने परिवर्तित घटक महाविद्यालयों की सेवाओं में समाहित होने के दावों पर वर्तमान विवाद उत्पन्न कर दिया है। दिनांक 12.6.1987 के पत्र में निहित अनुवर्ती निर्णय द्वारा, यह निर्देश दिया गया कि राज्य सरकार के पास लंबित अतिरिक्त पदों के सृजन के प्रस्ताव के अतिरिक्त, महाविद्यालयों में अतिरिक्त विषयों के पदों के अनुमोदन के प्रस्ताव, जो विश्वविद्यालयों से 30.4.1986 तक प्राप्त हुए थे एवं सरकार के पास लंबित थे, का भी पता लगाया जाए एवं निर्धारित प्रपत्र में आवश्यक जानकारी सरकार को भेजी जाए ताकि पदों के सृजन, अतिरिक्त विषयों को संबद्धता प्रदान करने एवं ऐसे पदों पर नियुक्त शिक्षकों के समामेलन पर विचार किया जा सके। सरकार के प्रस्ताव में, प्रत्येक विश्वविद्यालय को मौजूदा स्वीकृत शैक्षणिक एवं गैर-शैक्षणिक पदों, अतिरिक्त पदों के लिए लंबित प्रस्तावों, अतिरिक्त विषयों के पदों के लिए लंबित प्रस्तावों एवं विभिन्न शिक्षकों की सूची का पता लगाने के लिए एक तीन-सदस्यीय समिति गठित करने का निर्देश दिया गया था, जो कट-ऑफ तिथि से पहले स्वीकृत एवं गैर-स्वीकृत पदों पर कार्यरत थे।

40 संबद्ध महाविद्यालयों को संघटक महाविद्यालयों में परिवर्तित करने के सरकार के प्रस्ताव के क्रियान्वयन में, संबद्ध महाविद्यालयों के शासी निकायों द्वारा औपचारिक प्रस्ताव पारित किए गए। विश्वविद्यालयों द्वारा गठित तीन सदस्यीय समितियों ने निर्धारित प्रपत्र में आवश्यक जानकारी प्रस्तुत करने के लिए अपनी जाँच पूरी कर ली है। इसमें स्वीकृत पदों के विरुद्ध कार्यरत शिक्षकों एवं गैर-शिक्षण कर्मचारियों के नाम एवं उन पदों के विरुद्ध कार्यरत

कर्मचारियों के नाम अलग-अलग दर्शाए गए हैं जिनके सृजन की विश्वविद्यालय द्वारा राज्य सरकार की स्वीकृति हेतु अनुशंसा की गई थी।

17.1.1987 को, बिहार सरकार ने संबद्ध महाविद्यालयों में शिक्षकों एवं गैर-शिक्षण कर्मचारियों के पदों के सृजन के लिए निर्धारित तिथि अर्थात् 30.4.1986 से पहले प्राप्त प्रस्तावों की जाँच के लिए अंतर-विश्वविद्यालय बोर्ड के अध्यक्ष की अध्यक्षता में एक अलग समिति का गठन किया, जिन्हें घटक महाविद्यालयों में परिवर्तित कर दिया गया था। उक्त समिति की प्रतिवेदन पर, जिसे बाद में 01.02.1988 को पुनर्गठित किया गया, राज्य सरकार ने शिक्षण एवं गैर-शिक्षण पदों के विरुद्ध कार्यरत कर्मचारियों को समाहित करने का आदेश पारित किया, लेकिन केवल अनंतिम आधार पर, क्योंकि विभिन्न महाविद्यालयों में कर्मचारियों के कुछ सदस्यों के समाहित करने के दावों के संबंध में विवाद थे।

राज्य सरकार ने बाद में आठ सदस्यीय समिति एवं उसके बाद पाँच सदस्यीय समिति का गठन किया ताकि परिवर्तित घटक महाविद्यालयों में कर्मचारियों के आमेलन के प्रश्न पर विचार किया जा सके एवं निर्धारित तिथि से पहले विधिवत सृजित पदों की संख्या का पता लगाया जा सके जो अनुमोदन या मंजूरी के लिए सरकार के पास लंबित थे।

ऐसा प्रतीत होता है कि निर्वाचित सरकार के परिवर्तन के साथ ही पूर्ववर्ती सरकार द्वारा अतिरिक्त पदों के सृजन हेतु कार्यरत कर्मचारियों को समाहित करने के निर्णय पर पुनर्विचार किया गया, जिसके लिए अनुमोदन की प्रतीक्षा थी। बताया गया है कि बड़ी संख्या में कर्मचारियों ने पूर्व संबद्ध महाविद्यालयों की सेवाओं में चोरी-छिपे प्रवेश प्राप्त कर लिया एवं उक्त महाविद्यालयों के शासी निकाय के सदस्यों की मिलीभगत से उन महाविद्यालयों के संघटक महाविद्यालयों में परिवर्तन का लाभ उठाने का प्रयास किया। संबद्ध महाविद्यालयों में अभिलेखों में हेराफेरी एवं जालसाजी की बड़ी संख्या में शिकायतें सरकार को प्राप्त हुईं, जो विधान सभा एवं जनता में गरमागरम बहस का विषय बन गईं।

राज्य सरकार ने विभिन्न संबद्ध महाविद्यालयों द्वारा ऐसे कर्मचारियों की नियुक्ति में कथित अनियमितताओं की सतर्कता जाँच स्थापित करने का निर्णय लिया है, जिन्हें विभिन्न संबद्ध महाविद्यालयों में वैध रूप से नियुक्त नहीं किया गया था सरकार द्वारा महाविद्यालयों के अधिग्रहण के प्रस्ताव में निर्धारित कट-ऑफ तिथि से पहले। सतर्कता जाँच स्थापित होने पर, पूर्व संबद्ध महाविद्यालयों में शिक्षण एवं गैर-शिक्षण पदों पर कार्यरत विभिन्न श्रेणियों के कर्मचारियों की बड़े पैमाने पर बर्खास्तगी एवं सेवाओं से छूट की आशंकाएँ उत्पन्न हुईं। शिक्षण एवं गैर-शिक्षण दोनों पदों के धारकों का प्रतिनिधित्व करने वाले कर्मचारियों के संघ ने उच्च न्यायालय में एक रिट याचिका दायर की जिसके परिणामस्वरूप आक्षेपित निर्णय एवं वर्तमान अपील पारित हुई। रिट याचिकाओं में, संबद्ध महाविद्यालयों के कर्मचारियों के संघ ने राज्य एवं विश्वविद्यालयों को विश्वविद्यालयों के अंतर्गत विभिन्न महाविद्यालयों में कार्यरत लगभग चार हजार कर्मचारियों की नियुक्तियों को निरस्त करने या समाप्त करने से रोकने के लिए एक निषेधाज्ञा याचिका दायर की। उन्होंने यह भी अनुरोध किया कि उनकी सेवाओं की सुरक्षा की जाए एवं उनमें हस्तक्षेप न किया जाए।

उच्च न्यायालय की खंडपीठ ने मामले के अभिलेखों, विभिन्न समितियों की कार्यवाहियों की विषय-वस्तु एवं अधिनियम के प्रावधानों की व्याख्या करने के बाद, कर्मचारी संघ की रिट याचिकाओं को स्वीकार कर लिया। उच्च न्यायालय ने अपने निर्णय के अंतिम भाग में निम्नलिखित टिप्पणियाँ कीं एवं निम्नलिखित निर्देश जारी किए:-

"इस मामले को देखते हुए, विवाद अभी तक अधिनियम की धारा 4(14) के तहत अपेक्षित अंतिम निष्कर्ष पर नहीं पहुँचे हैं। इसलिए, यह न्यायालय संबंधित विश्वविद्यालयों को निर्देश देता है कि वे उक्त अधिनियम की धारा 4 की उपधारा (14) के अंतर्गत उन महाविद्यालयों के शिक्षकों की सेवाओं के नियमितीकरण के संबंध में कदम उठाएँ जो चौथे चरण में विभिन्न विश्वविद्यालयों के घटक सहभागी बन गए हैं।

यद्यपि विश्वविद्यालयों को पक्षकार बनाया गया है, जिसमें उक्त विश्वविद्यालयों के कुलपति भी शामिल हैं, एवं उन्हें नोटिस भी दिया गया है, लेकिन विश्वविद्यालयों या कुलपतियों की ओर से कोई भी उपस्थित नहीं हुआ एवं न ही कोई हलफनामा दायर किया गया है।

इस मामले को ध्यान में रखते हुए, यह न्यायालय विश्वविद्यालयों को, जो इस कार्यवाही के पक्षकार हैं, निर्देश देता है कि वे राज्य सरकार के संदेश के अनुसार कदम उठाएँ, जो इस निर्णय में की गई टिप्पणियों के आलोक में रिट आवेदन के अनुलग्नक-5 में है एवं उक्त अधिनियम की धारा 4(14) के प्रावधानों के अनुसार, इस आदेश की प्रति प्राप्त होने/प्रस्तुत होने की तिथि से चार महीने की अवधि के भीतर कदम उठाएँ।

इस मामले को ध्यान में रखते हुए, यह न्यायालय विश्वविद्यालयों को, जो इस कार्यवाही के पक्षकार हैं, निर्देश देता है कि वे राज्य सरकार के संदेश के अनुसार कदम उठाएँ, जो इस निर्णय में की गई टिप्पणियों के आलोक में रिट आवेदन के अनुलग्नक-5 में है एवं उक्त अधिनियम की धारा 4(14) के प्रावधानों के अनुसार, इस आदेश की प्रति प्राप्त होने/प्रस्तुत होने की तिथि से चार महीने की अवधि के भीतर कदम उठाएँ।

उच्च न्यायालय के निर्णय एवं निर्देशों से व्यथित होकर, बिहार राज्य ने यह अपील दायर की है। इस अपील की कार्यवाही के अभिलेखों से, ऐसा प्रतीत होता है कि इस न्यायालय ने यह विचार किया कि विश्वविद्यालयों को उच्च न्यायालय के आदेश को लागू करने एवं विभिन्न श्रेणियों के कर्मचारियों को उनके घटक महाविद्यालयों में समाहित करने की प्रक्रिया पूरी करने का निर्देश देने से पहले, एक उच्चाधिकार प्राप्त आयोग के माध्यम से एक स्वतंत्र जाँच की आवश्यकता है ताकि विभिन्न संबद्ध महाविद्यालयों में कथित फर्जी नियुक्तियों की पहचान की जा सके, जो राज्य के विभिन्न महाविद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों के

अधिकारियों की मिलीभगत से पूर्व संबद्ध महाविद्यालयों की सेवाओं में घुस आए थे। उपरोक्त दृष्टिकोण से, नए झारखंड राज्य को एक पृथक पक्षकार के रूप में जोड़ने के बाद (बिहार राज्य के दो राज्यों में विभाजन के परिणामस्वरूप), इस न्यायालय ने दिनांक 12.10.2001 के आदेश द्वारा श्री न्यायमूर्ति एस. सी. अग्रवाल, इस न्यायालय के सेवानिवृत्त न्यायाधीश को एक सदस्यीय जाँच आयोग के रूप में नियुक्त किया ताकि परिवर्तित संघटक महाविद्यालयों की सेवाओं में पूर्व संबद्ध महाविद्यालयों के कर्मचारियों के आमेलन से संबंधित विभिन्न विवादों एवं विवादों की जाँच की जा सके। माननीय सेवानिवृत्त न्यायाधीश के एक सदस्यीय आयोग द्वारा जाँच के बाद उत्तर दिए जाने वाले विचारार्थ विषय इस प्रकार हैं:-

"संदर्भ की शर्तें"

1. बिहार राज्य के दिनांक 19.8.1986 के स्वीकृति पत्र के अनुसार, जिन 40 महाविद्यालयों को घटक महाविद्यालयों में परिवर्तित किया गया था, उनमें शिक्षकों एवं गैर-शिक्षण कर्मचारियों के कितने स्वीकृत पद थे?
2. शिक्षकों एवं गैर-शिक्षण कर्मचारियों के पदों के सृजन के संबंध में कितने प्रस्ताव बिहार राज्य के शिक्षा विभाग या विश्वविद्यालयों को 30.4.1986 से पहले प्रस्तुत किए गए थे, परिशिष्ट 'खा' (विशेष अनुमति याचिका के पृष्ठ 208) में उल्लिखित अंतिम तिथि सरकारी पत्र दिनांक 19.8.1986 के अनुसार घटक महाविद्यालयों में परिवर्तित 36 महाविद्यालयों के संबंध में? [महाविद्यालयों की सूची विशेष अनुमति याचिका के पृष्ठ 206-207 पर है एवं चार अन्य महाविद्यालयों के संबंध में सरकारी संचार में उल्लिखित अन्य तिथियां]?
3. घटक महाविद्यालयों में आमेलन चाहने वाले कितने शिक्षक एवं गैर-शिक्षण कर्मचारी महाविद्यालय सेवा आयोग/विश्वविद्यालय सेवा आयोग द्वारा किए गए

चयनों के माध्यम से नियुक्त नहीं हुए एवं क्या उनके पास अधिनियम एवं संविधि द्वारा निर्धारित बुनियादी योग्यताएँ हैं? यह जाँच प्रतिवादियों के इस तर्क पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं डालेगी कि धारा 57 ए ऐसे चयन पर लागू नहीं होती, जैसा कि उच्च न्यायालय ने अपने निर्णय में माना है?

4. कितने शिक्षक एवं गैर-शिक्षण कर्मचारी सरकारी पत्र दिनांक 19.8.1986 एवं परिशिष्ट 'खा' एवं संबंधित विश्वविद्यालय एवं घटक महाविद्यालय के बीच बिहार राज्य विश्वविद्यालय अधिनियम, 1976 की धारा 4(14) एवं सरकार के अन्य आदेशों के तहत हुए समझौते के आधार पर आमेसन के हकदार होंगे?

एक सदस्यीय आयोग ने दो वर्षों के भीतर अभिलेखों की जाँच, राज्य एवं महाविद्यालयों के विभिन्न प्राधिकारियों एवं व्यक्तिगत कर्मचारियों की सुनवाई का विशाल कार्य पूरा कर लिया। जाँच पूरी करने के लिए अवधि विस्तार की माँग करने के बाद, आयोग ने 19.12.2003 को एक विस्तृत प्रतिवेदन प्रस्तुत की। जाँच आयोग की प्रतिवेदन प्रस्तुत करने पर, पक्षों को अपनी लिखित आपत्तियाँ, यदि कोई हों, प्रस्तुत करने का समय दिया गया। इस न्यायालय के समक्ष भी बड़ी संख्या में आपत्तियाँ दायर की गई हैं। आयोग ने, जैसा कि उससे अपेक्षित था, जानबूझकर, संबंधित कानूनी मुद्दों पर कोई राय व्यक्त करने से परहेज किया है, जिन पर इस न्यायालय के समक्ष निर्णय लंबित है। आयोग द्वारा अधिनियम के प्रावधानों पर कुछ राय इस न्यायालय को आवश्यक जानकारी प्रदान करने के सीमित उद्देश्य से व्यक्त की गई हैं, ताकि एक सही एवं न्यायसंगत निष्कर्ष पर पहुँचा जा सके।

'संदर्भ की शर्तें' संख्या 1 के उत्तर में, जाँच आयोग ने विभिन्न संबद्ध महाविद्यालयों के लिए अलग-अलग कट-ऑफ तिथियाँ ली हैं, जिन तिथियों को उन्हें घटक महाविद्यालयों में परिवर्तित करने का निर्णय लिया गया था। इस प्रकार, 30.4.1986 या 31.3.1987 या 01.1.1987 को विशिष्ट महाविद्यालयों के लिए लागू तिथियों के रूप में लेते हुए, आयोग ने स्वीकृत पदों की संख्या एवं उनमें से प्रत्येक के लिए कार्यरत कर्मचारियों की संख्या की

पहचान की है। इसने एक अल्पसंख्यक संस्थान के लिए अलग प्रतिवेदन दी है जिसमें कट-ऑफ तिथि का कोई संकेत नहीं था। 2 वें प्रश्न का उत्तर देने के लिए, आयोग ने इसे दो भागों में विभाजित किया है एवं प्रत्येक का अलग-अलग उत्तर दिया है। प्रत्येक महाविद्यालय की पहचान की गई है जिसने अतिरिक्त रिक्तियों के निर्माण के संबंध में प्रस्ताव भेजे थे, जो संबंधित विश्वविद्यालयों द्वारा कट-ऑफ तिथि से पहले राज्य के शिक्षा विभाग को प्रस्तुत किए गए थे।

आयोग द्वारा अतिरिक्त पदों के सृजन के लिए ईपीसीएच महाविद्यालयों द्वारा निर्धारित तिथि से पहले प्रस्तुत किए गए प्रस्तावों की अलग से पहचान की गई है, जो संबंधित विश्वविद्यालयों के पास लंबित थे।

विश्वविद्यालयों को समय-समय पर विभिन्न पत्रों द्वारा सूचित किए गए सरकार के निर्णय के आधार पर, आयोग इस निष्कर्ष पर पहुँचा है कि परिवर्तित घटक महाविद्यालयों के शैक्षणिक एवं गैर-शैक्षणिक कर्मचारियों की सेवाओं को केवल उन अतिरिक्त पदों पर समाहित करने का निर्णय लिया गया था जिनके लिए विश्वविद्यालयों से प्रस्ताव राज्य सरकार को निर्धारित तिथि तक प्राप्त हो चुके थे एवं राज्य सरकार के पास विचारार्थ लंबित थे। आयोग की राय में, ऐसे पदों पर कार्यरत कर्मचारियों के समाहित करने पर विचार करने का सरकार का कोई निर्णय नहीं है, जिनके सृजन का प्रस्ताव शासी निकायों द्वारा निर्धारित तिथि से पहले विश्वविद्यालयों को प्रस्तुत किया जा चुका था।

हमने सरकार द्वारा समय-समय पर लिए गए निर्णयों की विषयवस्तु का ध्यानपूर्वक अध्ययन किया है, जो उसके दिनांक 19.8.1986, 25.8.1986, 30.6.1986 एवं 18.12.1989 के पत्रों में निहित हैं। इस स्तर पर, हमारे लिए यह कहना उचित होगा कि आयोग की प्रतिवेदन के इस भाग पर प्रस्तुत आपत्तियों में हमें कोई दम नहीं दिखता, जो संबद्ध महाविद्यालयों को संघटक महाविद्यालयों में परिवर्तित करने के विषय पर सरकार के विभिन्न प्रस्तावों की विषयवस्तु पर आधारित है। हम आयोग की इस राय से सहमत हैं कि

कर्मचारियों के केवल उन्हीं सदस्यों पर आमेलन के लिए विचार किया जा सकता है जो अतिरिक्त पदों पर कार्यरत थे जिनके लिए प्रस्ताव राज्य सरकार द्वारा अंतिम तिथि से पहले प्राप्त किए गए थे। विश्वविद्यालय स्तर पर लंबित पदों के सृजन के अन्य प्रस्ताव, सरकार द्वारा 40 संबद्ध महाविद्यालयों के अधिग्रहण के लिए लिए गए विभिन्न निर्णयों के दायरे से बाहर हैं। जिन पदों के लिए प्रस्ताव अंतिम तिथि से पहले राज्य सरकार तक नहीं पहुँचे थे, उनके विरुद्ध कार्यरत कर्मचारियों की सेवाओं के आमेलन के दावे अस्वीकार किए जाने योग्य हैं।

संदर्भ संख्या 3 के संबंध में, जिसमें उन शिक्षण एवं गैर-शिक्षण कर्मचारियों की पहचान की आवश्यकता है, जिनकी नियुक्ति कॉलेज सेवा आयोग/विश्वविद्यालय सेवा आयोग द्वारा चयन के माध्यम से नहीं की गई है एवं उनके पास अधिनियम एवं परिनियमों के अनुसार पदों के लिए निर्धारित बुनियादी योग्यताएँ हैं या नहीं, इसकी जाँच की जानी है। आयोग का निष्कर्ष यह है कि स्क्रीनिंग समिति द्वारा दिनांक 30-1-1987 को प्रस्तुत संशोधित सूची, जिसमें आमेलन के लिए अनुशंसित कर्मचारियों के नाम शामिल हैं, स्वीकृति योग्य नहीं है।

अपनी जाँच के दौरान, आयोग ने पाया कि कुछ महाविद्यालयों के शासी निकायों की कार्यवाहियों सहित अभिलेखों में छेड़छाड़ एवं छेड़छाड़ की गई थी। विश्वविद्यालयों द्वारा सरकार के प्रस्ताव के तहत गठित स्क्रीनिंग समितियों ने इस पहलू की जाँच की है एवं उन कर्मचारियों की सूची तैयार की है जो समायोजन के योग्य थे। आयोग की राय के अनुसार, स्क्रीनिंग समिति द्वारा अपना कार्य पूरा करने के बाद, स्क्रीनिंग समिति बिना कोई कारण बताए, कुछ एवं नामों को शामिल करने या अन्य को बाहर करने के लिए संशोधित सूची प्रस्तुत नहीं कर सकती थी। यह समावेशन एवं बहिष्करण मूल प्रतिवेदन में किसी चूक या त्रुटि के कारण हो सकता है या अन्य बाहरी कारणों से किया गया हो सकता है। आयोग की राय में, अंतिम उल्लिखित संभावना से इनकार नहीं किया जा सकता। इन्हीं परिस्थितियों में

आयोग ने सिफारिश की है कि स्क्रीनिंग समिति की 30.1.1987 की संशोधित सूची पर विचार नहीं किया जाना चाहिए।

आयोग की प्रतिवेदन पढ़ने एवं हमारे समक्ष विभिन्न पक्षों द्वारा उठाई गई आपत्तियों पर विचार करने के बाद, हमारी राय में, आयोग की प्रतिवेदन, जिसमें स्क्रीनिंग समिति द्वारा 30.1.1987 को प्रस्तुत संशोधित सूची को अस्वीकार करने का प्रस्ताव है, जिसमें मूल सूची से कुछ नामों को शामिल या बहिष्कृत किया गया है, स्वीकार किए जाने योग्य है।

शिक्षण एवं गैर-शिक्षण पदों के विभिन्न श्रेणियों के धारकों की योग्यताओं के संबंध में, आयोग ने विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की सिफारिशों के अनुसार विभिन्न शिक्षण पदों के लिए योग्यताओं को निर्धारित करने वाले विभिन्न कानूनों की विषयवस्तु का अध्ययन किया है, जिन्हें विश्वविद्यालयों ने संशोधित वेतनमानों के कार्यान्वयन के साथ अपनाया था।

हमारी राय में, संबद्ध महाविद्यालयों, जिन्हें घटक महाविद्यालयों के रूप में लिया गया है, के मौजूदा शिक्षण एवं गैर-शिक्षण कर्मचारियों के समामेलन का निर्णय संबंधित विश्वविद्यालयों के अनन्य अधिकार क्षेत्र में है। प्रत्येक कर्मचारी की योग्यता एवं शिक्षण एवं गैर-शिक्षण पद के लिए योग्यता निर्धारित करने वाले प्रासंगिक समय पर लागू संबंधित कानून, यदि कोई हो, को ध्यान में रखते हुए, विश्वविद्यालय द्वारा व्यक्तिगत मामलों में निर्णय लिया जाना आवश्यक है। यह निर्णय न्यायमूर्ति अग्रवाल आयोग की प्रतिवेदन के निष्कर्षों के आधार पर एवं इस निर्णय में स्पष्ट की गई कानूनी स्थिति के आलोक में लिया जाना चाहिए।

संदर्भ संख्या 4 के उत्तर में, जिसमें 19.8.1986 के सरकारी संकल्प एवं विश्वविद्यालयों एवं संबंधित महाविद्यालयों के बीच हुए समझौतों के आधार पर आमेलन के हकदार शिक्षकों एवं गैर-शिक्षण कर्मचारियों की पहचान करने की आवश्यकता है, आयोग ने विभिन्न महाविद्यालयों के अभिलेखों की गहन जाँच एवं पड़ताल के बाद तीन अलग-अलग सूचियाँ दी हैं: (i) स्वीकृत पदों पर नियुक्त शिक्षकों को विचार के लिए पात्र होने की तिथि के क्रम में

रखा गया है; (ii) उन पदों पर नियुक्त शिक्षकों की सूची जिनके लिए विश्वविद्यालयों द्वारा राज्य सरकार को कट-ऑफ तिथि तक सिफारिशें भेजी गई थीं, उन्हें विचार के लिए पात्र होने की तिथि के क्रम में व्यवस्थित किया गया है, एवं (iii) उन पदों पर नियुक्त शिक्षकों की सूची जिनके लिए विश्वविद्यालयों द्वारा बिहार राज्य को कट-ऑफ तिथि के बाद सिफारिशें भेजी गई थीं एवं जिनके लिए विश्वविद्यालयों द्वारा कोई सिफारिशें नहीं भेजी गई थीं।

विभिन्न पक्षों की ओर से उपस्थित अधिवक्ताओं की सुनवाई एवं उनकी आपत्तियों पर विचार करने के बाद, हमें आयोग की प्रतिवेदन को स्वीकार करने में कोई कठिनाई नहीं दिख रही है जहाँ तक सूची संख्या (i) में स्वीकृत पदों पर कार्यरत कर्मचारियों के नाम शामिल हैं एवं सूची संख्या (ii) में उन पदों पर कार्यरत कर्मचारियों के नाम शामिल हैं जिनके लिए विश्वविद्यालयों द्वारा राज्य को कट-ऑफ तिथि तक सिफारिशें भेजी गई थीं। जहाँ तक सूची संख्या (iii) का संबंध है, इस पर राज्य सरकार के समक्ष गंभीर आपत्ति की गई है एवं हमारी राय में, इसका औचित्य है। जिन शिक्षकों की नियुक्ति उन पदों पर हुई थी जिनके लिए विश्वविद्यालयों द्वारा राज्य को अंतिम तिथि के बाद सिफारिशें भेजी गई थीं या जिनके लिए विश्वविद्यालयों द्वारा कोई सिफारिशें नहीं भेजी गई थीं, वे आमेलन के लिए विचार किए जाने के अधिकार का दावा नहीं कर सकते, चाहे सिफारिशें भेजने में कथित देरी के कारण कुछ भी हों। यह संभव है कि आकस्मिक परिस्थितियों के कारण, कुछ सिफारिशें जो विश्वविद्यालयों द्वारा राज्य को भेजी जा सकती थीं, अंतिम तिथि से पहले प्रस्तुत नहीं की गईं, फिर भी, सरकारी प्रस्ताव की स्पष्ट शर्तों के आधार पर, अंतिम तिथि के बाद अनुशंसित पदों पर कार्यरत ऐसे नियुक्त व्यक्ति वैध रूप से आमेलन के लिए विचार किए जाने के अधिकार का दावा नहीं कर सकते।

उच्च न्यायालय की खंडपीठ ने अधिनियम के प्रासंगिक प्रावधानों की व्याख्या की एवं कर्मचारियों की ओर से प्रस्तुत तर्कों को स्वीकार किया कि धारा 4(1)(14) के अनुसार, संबंधित विश्वविद्यालय स्वयं, अपने अधिकार क्षेत्र के अंतर्गत आने वाले महाविद्यालयों के

संबंध में, संबद्ध महाविद्यालयों में नियुक्तियों की वैधता एवं उन नियुक्तियों के घटक महाविद्यालयों में समामेलन से संबंधित विवादों पर निर्णय लेने के लिए अधिकृत हैं। उच्च न्यायालय का मत था कि धारा 4(1)(14) के परंतुक में निहित गैर-बाधा खंड के मद्देनजर, अधिनियम की धारा 35 में निहित बाधाएं, जो संबद्ध महाविद्यालयों में पदों के सृजन एवं नियुक्ति के लिए पूर्व अनुमोदन प्रदान करने का प्रावधान करती हैं, विश्वविद्यालयों द्वारा घटक महाविद्यालयों के रूप में रूपांतरण पर अधिग्रहित संबद्ध महाविद्यालयों के मौजूदा कर्मचारियों के समामेलन पर लागू नहीं होंगी।

उच्च न्यायालय ने राज्य की ओर से प्रस्तुत इस तर्क को खारिज कर दिया कि केवल उसके पास ही सतर्कता जाँच सहित जाँच स्थापित करने का अधिकार है ताकि पूर्व संबद्ध महाविद्यालयों के केवल उन्हीं कर्मचारियों की पहचान की जा सके एवं उनके आमेलन पर विचार किया जा सके जिन्हें राज्य सरकार के पूर्व अनुमोदन से विधिवत नियुक्त किया गया था। उच्च न्यायालय ने कर्मचारी महासंघ द्वारा दायर रिट याचिकाओं को स्वीकार कर लिया एवं विश्वविद्यालयों को, जिन्हें याचिकाओं में पक्षकार बनाया गया है, निर्देश देते हुए एक रिट जारी की कि वे आदेश की तिथि से चार महीने की अवधि के भीतर अधिनियम की धारा 4(1)(14) के अनुसार संबद्ध महाविद्यालयों के मौजूदा कर्मचारियों के आमेलन पर विचार करने के लिए कदम उठाएँ।

विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री राकेश द्विवेदी बिहार राज्य की ओर से हमारे समक्ष अपीलकर्ता के रूप में उपस्थित हुए हैं। उन्होंने उच्च न्यायालय के निर्णय पर मुख्यतः इस आधार पर आपत्ति जताई है कि इसने अधिनियम के प्रासंगिक प्रावधानों की गलत व्याख्या की है एवं इस गलत निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि संबंधित विश्वविद्यालयों को ही अपने अधिकार क्षेत्र में संबद्ध महाविद्यालयों के संबंध में अधिनियम की धारा 4(1)(14) के अनुसार संबद्ध महाविद्यालयों के विभिन्न श्रेणियों के कर्मचारियों (शिक्षण एवं गैर-शिक्षण) के समामेलन के दावों के गुण-दोष पर विचार करना होगा।

हम सबसे पहले राज्य की ओर से अपीलकर्ता के रूप में अधिनियम के प्रासंगिक प्रावधानों की व्याख्या पर प्रस्तुत कानूनी दलीलों पर विचार करते हैं।

अधिनियम के विभिन्न प्रासंगिक प्रावधानों की व्याख्या पर प्रस्तुत प्रतिद्वंद्वी तर्कों को समझने के लिए, योजना की जाँच करना एवं अधिनियम के प्रासंगिक प्रावधानों का संक्षिप्त सर्वेक्षण करना आवश्यक होगा।

यह अधिनियम वर्ष 1976 में 'बिहार राज्य के मुजफ्फरपुर, भागलपुर, रांची, गया [भोदगया] एवं दरभंगा में संबद्ध शिक्षण विश्वविद्यालयों की स्थापना एवं निगमन हेतु' पारित किया गया था। धारा 2(ग) संबद्ध महाविद्यालयों को इस प्रकार परिभाषित करती है:-

"2(सी) 'संबद्ध महाविद्यालय' का अर्थ है वह शैक्षणिक संस्थान जिसे इस अधिनियम एवं उससे संबंधित विश्वविद्यालय के कानूनों के प्रावधानों के अनुसार विश्वविद्यालय से विशेषाधिकार प्राप्त हैं।"

धारा 2(i) 'संघटक महाविद्यालय' को इस प्रकार परिभाषित करती है:-

"2(i) 'संघटक महाविद्यालय' का अर्थ है विश्वविद्यालय द्वारा अनुरक्षित या नियंत्रित शिक्षण संस्थान।"

धारा 4 विश्वविद्यालयों के विभिन्न उद्देश्यों एवं शक्तियों का उल्लेख करती है एवं अधिनियम की धारा 4 की उप-धारा (i) का खंड 14, जो प्रत्यक्ष रूप से हमारे समक्ष व्याख्या हेतु विचाराधीन है, विश्वविद्यालय को किसी भी शैक्षणिक संस्थान का प्रबंधन संभालने एवं उसकी परिसंपत्तियों एवं देनदारियों को अपने अधिकार में लेने की शक्ति प्रदान करता है। विश्वविद्यालय इस शक्ति का प्रयोग राज्य सरकार की स्वीकृति प्राप्त करने के बाद कर सकता है। विश्वविद्यालय राज्य सरकार से प्रस्ताव प्राप्त होने पर संबंधित शासी निकाय, प्रबंधन के साथ समझौता करके भी किसी शैक्षणिक संस्थान का अधिग्रहण कर सकता है। इस मामले में, संबद्ध महाविद्यालयों के अधिग्रहण का प्रस्ताव राज्य सरकार की ओर से आया था, जिसकी सूचना विश्वविद्यालयों को 19.3.1986 के पत्र द्वारा दी गई थी। धारा 4(1) के खंड 14 के

परंतुक में एक गैर-बाधक खंड शामिल है। यह विश्वविद्यालय को संबद्ध महाविद्यालयों में नियुक्तियों, विशेष वेतन या भत्तों एवं उनसे संबंधित अनियमितताओं, यदि कोई हो, के संबंध में निर्णय लेने की शक्ति प्रदान करता है, जिनका प्रबंधन विश्वविद्यालय अपनी परिसंपत्तियों एवं देनदारियों के साथ ग्रहण करता है। जैसा कि परंतुक में कहा गया है, विश्वविद्यालय द्वारा लिया गया निर्णय 'अंतिम एवं बाध्यकारी होगा'। अधिनियम की धारा 41) के खंड 14 एवं उसके परंतुक का पूर्ण पुनरुत्पादन आवश्यक है:-

"4. विश्वविद्यालय के उद्देश्य एवं शक्तियाँ (1) विश्वविद्यालय के निम्नलिखित उद्देश्य एवं शक्तियाँ होंगी।

.....

.....

(14) इस अधिनियम के प्रयोजनों को बढ़ावा देने के लिए अन्य निकायों एवं व्यक्तियों के साथ समझौता करना एवं उनके अधीन किसी भी संस्था का प्रबंधन संभालना एवं उसकी परिसंपत्तियों एवं देनदारियों को अपने अधिकार में लेना:

बशर्ते कि ऐसा समझौता करने से पहले विश्वविद्यालय राज्य सरकार की मंजूरी प्राप्त करेगा, या राज्य सरकार से ऐसा प्रस्ताव प्राप्त होने पर ऐसा करेगा:

बशर्ते कि यदि किसी भी समय किसी वेतन, विशेष वेतन या भत्ते के निर्धारण एवं भुगतान में, या विश्वविद्यालय द्वारा ऐसे किसी समझौते के तहत अपने प्रबंधन में ली गई किसी संस्था में किसी नियुक्ति में कोई अनियमितता पाई जाती है, तो इस अधिनियम में निहित किसी भी विपरीत बात के होते हुए भी, विश्वविद्यालय को इसकी समीक्षा करने के बाद निर्णय लेने की शक्ति होगी एवं ऐसा निर्णय अंतिम एवं बाध्यकारी होगा।

[जोर दिया गया]

अन्य प्रासंगिक प्रावधान अधिनियम की धारा 35 है जो किसी भी संबद्ध महाविद्यालय को राज्य सरकार के पूर्व अनुमोदन के बिना कोई पद सृजित करने या किसी पद पर नियुक्ति करने से रोकता है। धारा 35 के खंड (ख) के उपखंड (i) को 1990 के अधिनियम संख्या 3 द्वारा प्रतिस्थापित किया गया है, लेकिन धारा 35 के खंड (ख) के मूल उपखंड (i) में कोई भी महत्वपूर्ण परिवर्तन नहीं किया गया है। 1990 के अधिनियम संख्या 3 के तहत नए खंड द्वारा प्रतिस्थापित किए जाने से पहले धारा 35 के खंड (ख) का उपखंड (i) इस प्रकार था:-

"35. राज्य सरकार की पूर्व स्वीकृति के बिना नियुक्ति हेतु कोई पद सृजित नहीं किया जाएगा। इस अधिनियम में किसी बात के होते हुए भी, कोई भी विश्वविद्यालय या ऐसे विश्वविद्यालय से संबद्ध कोई महाविद्यालय, ऐसे महाविद्यालय को छोड़कर:-

(क).....

(ख) जो किसी धार्मिक या भाषाई अल्पसंख्यक द्वारा स्थापित है;

(i) इस अधिनियम के प्रारंभ होने के पश्चात, वित्तीय दायित्व से संबंधित कोई शिक्षण

या गैर-शिक्षण पद सृजित नहीं करेगा;

(ii)

(iii)

(iv) राज्य सरकार की पूर्व स्वीकृति के बिना।

1990 के अधिनियम संख्या 3 द्वारा सम्मिलित धारा 35 के खंड (ख) का उपखंड (i) इस प्रकार है:-

"35. राज्य सरकार की पूर्व स्वीकृति के बिना नियुक्ति हेतु कोई पद सृजित नहीं किया जाएगा - इस अधिनियम में किसी बात के होते हुए भी, कोई भी विश्वविद्यालय या ऐसे विश्वविद्यालय से संबद्ध कोई महाविद्यालय, ऐसे महाविद्यालय को छोड़कर, जो -

(क)

(ख) जो किसी धार्मिक या भाषाई अल्पसंख्यक द्वारा स्थापित है;

(ii) इस अधिनियम के लागू होने के पश्चात, राज्य सरकार की पूर्व स्वीकृति के बिना वित्तीय दायित्वों से संबंधित कोई भी शिक्षण या गैर-शिक्षण पद सृजित नहीं किया जाएगा।

[जोर दिया गया]

अधिनियम की धारा 35 की एक नई उपधारा (3) भी 1993 के अधिनियम संख्या 17 द्वारा जोड़ी गई है, जो इस प्रकार है:-

"धारा 35(3) इस अधिनियम, या इसके अंतर्गत बनाए गए कानूनों, नियमों या विनियमों के प्रावधानों के विपरीत या अनियमित या अनधिकृत तरीके से की गई कोई भी नियुक्ति या पदोन्नति अमान्य होगी एवं किसी भी समय समाप्त कर दी जाएगी। ऐसी नियुक्ति या पदोन्नति के विरुद्ध विश्वविद्यालय द्वारा किया गया व्यय सार्वजनिक मांग वसूली अधिनियम, 1914 के प्रावधानों के तहत सार्वजनिक मांग के रूप में ऐसी नियुक्ति या पदोन्नति करने वाले अधिकारी से वसूल किया जाएगा।

धारा 57 के अंतर्गत, बिहार राज्य विश्वविद्यालय [अंगठित महाविद्यालय] सेवा आयोग की नियुक्ति का प्रावधान है जो अंगठित महाविद्यालयों में पदों पर चयन एवं नियुक्ति हेतु अनुशंसाएँ करेगा। धारा 57 ए, जो 1982 के अधिनियम संख्या 68 द्वारा सम्मिलित की गई थी एवं उस समय संबद्ध महाविद्यालयों के रूप में परिवर्तित संबद्ध महाविद्यालयों पर लागू थी, संबद्ध महाविद्यालयों के कर्मचारियों की बर्खास्तगी, समाप्ति, निष्कासन एवं सेवानिवृत्ति पर संबद्ध महाविद्यालयों के लिए स्थापित 'महाविद्यालय सेवा आयोग' से परामर्श की आवश्यकता का प्रावधान करती है। धारा 57 ए की उप-धारा (2) का खंड (सी), जिसे 1990 के अधिनियम संख्या 3 द्वारा प्रतिस्थापित किया गया है, केवल विधायी आशय का पता लगाने के उद्देश्य से एवं संबद्ध महाविद्यालयों के कर्मचारियों के आमेलन को विनियमित करने वाले प्रावधानों की व्याख्या में सहायता के लिए प्रासंगिक है। धारा 57 ए की उप-धारा (2) के

अनुसार संबद्ध महाविद्यालयों में शिक्षण पदों पर नियुक्तियाँ करने के लिए 'महाविद्यालय सेवा आयोग' की सिफारिश आवश्यक है। इस प्रकार, दो अलग-अलग आयोग हैं: एक बिहार राज्य विश्वविद्यालय [संघटक महाविद्यालय] सेवा आयोग अधिनियम, 1987 के अंतर्गत स्थापित किए जाने वाले घटक महाविद्यालयों के लिए एवं दूसरा बिहार महाविद्यालय सेवा आयोग अधिनियम, 1976 के अंतर्गत स्थापित किए जाने वाले संबद्ध महाविद्यालयों के लिए। धारा 57 ए, जिसमें विभिन्न संशोधन अधिनियमों द्वारा जोड़ी गई सभी उप-धाराएँ एवं खंड शामिल हैं, इस प्रकार हैं:-

'[57 ए] (1) राज्य सरकार द्वारा संचालित न किए जाने वाले संबद्ध महाविद्यालयों के शिक्षकों की नियुक्ति, महाविद्यालय सेवा आयोग की सिफारिश पर शासी निकाय द्वारा की जाएगी। ऐसे महाविद्यालयों के शिक्षकों की बर्खास्तगी, सेवा समाप्ति, निष्कासन, सेवा से सेवानिवृत्ति या पदावनति, शासी निकाय द्वारा महाविद्यालय सेवा आयोग के परामर्श से, परिनियमों द्वारा निर्धारित तरीके से की जाएगी:

बशर्ते कि धर्म एवं भाषा के आधार पर संबद्ध अल्पसंख्यक महाविद्यालयों के शासी निकाय, महाविद्यालय सेवा आयोग के अनुमोदन से शिक्षकों की नियुक्ति, बर्खास्तगी, निष्कासन या सेवा समाप्त कर सकेंगे या उनके विरुद्ध अनुशासनात्मक कार्रवाई कर सकेंगे:

इसके अतिरिक्त, यह भी प्रावधान है कि निंदा, वेतन वृद्धि रोकने या दक्षता सीमा पार करने एवं आरोपों की जाँच पूरी होने तक निलंबन से संबंधित मामलों में महाविद्यालय सेवा आयोग की सलाह आवश्यक नहीं होगी।

(2) महाविद्यालयों के शिक्षकों की नियुक्ति हेतु सिफारिश निम्नलिखित प्रावधानों के अनुसार की जाएगी:-

(क) महाविद्यालय सेवा आयोग, संबद्ध महाविद्यालयों के शिक्षकों की नियुक्ति, बर्खास्तगी या नियुक्ति आदि के लिए अपनी सहमति/सिफारिशें उनके संघटक महाविद्यालय बनने की तिथि तक देगा। इसकी सहमति सिफारिशें केवल उसी तिथि तक वैध मानी जाएँगी।

(ख) यदि महाविद्यालय सेवा आयोग की सिफारिश प्राप्त होने तक कोई संबद्ध महाविद्यालय किसी विश्वविद्यालय का संघटक महाविद्यालय बन जाता है, तो सिंडिकेट उक्त अधिनियम की धारा 57 की उपधारा (4) के अनुसार कार्रवाई करेगा, मानो सिफारिश आयोग द्वारा की गई हो।

²[(ग)] संबद्ध महाविद्यालयों के उन शिक्षकों की सेवाओं को समाहित करने के प्रयोजनार्थ, जिन्हें महाविद्यालय सेवा आयोग की स्थापना से पूर्व महाविद्यालय के शासी निकाय द्वारा स्वीकृत पद पर नियुक्त किया गया था एवं जिनकी सेवाओं को विश्वविद्यालय द्वारा अनुमोदित किया गया है, साथ ही ऐसे शिक्षकों की सेवाओं को भी समाहित करने के प्रयोजनार्थ, जिन्हें विश्वविद्यालय सेवा आयोग (विघटित महाविद्यालय सेवा आयोग) की अनुशंसाओं पर शासी निकाय द्वारा नियुक्त किया गया था, बिहार राज्य विश्वविद्यालय (अंगठित महाविद्यालय) सेवा आयोग का अनुमोदन आवश्यक होगा एवं ऐसे शिक्षकों को महाविद्यालय के अंगठित होने की तिथि से विश्वविद्यालय सेवा में समाहित किया जाएगा एवं उनकी वरिष्ठता परिनियमों में निर्धारित नियमों के अनुसार निर्धारित की जाएगी।

बिहार राज्य की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने तर्क दिया है कि संबद्ध महाविद्यालयों में अतिरिक्त पदों एवं उनके विरुद्ध नियुक्तियों को मंजूरी देने का अधिकार अधिनियम की धारा 35 के अंतर्गत राज्य के अनन्य अधिकार क्षेत्र एवं शक्ति के अंतर्गत

आता है। यह धारा एक गैर-बाधक खंड से शुरू होती है, जिसका अर्थ है कि धारा 35 का धारा 4(1) के खंड 14 पर अधिभावी प्रभाव होगा। तर्क यह दिया गया है कि संबद्ध महाविद्यालयों के ऐसे नियुक्त व्यक्ति जो गैर-स्वीकृत पदों पर कार्यरत थे, संबद्ध महाविद्यालयों के संघटक महाविद्यालयों में रूपांतरण के बाद समामेलन का कोई अधिकार नहीं ले सकते। यह बताया गया है कि राज्य सरकार के दिनांक 12.6.1987 एवं 18.12.1989 के निर्णयों का लाभ उठाते हुए, जिनके द्वारा विश्वविद्यालय या राज्य सरकार के पास लंबित पदों पर नियुक्त व्यक्तियों के संबंध में सूचना मांगी गई थी, विभिन्न संबद्ध महाविद्यालयों में अभिलेखों में बड़ी संख्या में हेराफेरी एवं जालसाजी की गई ताकि कई कर्मचारियों को संघटक महाविद्यालयों की सेवाओं में गुप्त रूप से प्रवेश मिल सके, जिन्हें या तो अंतिम तिथि के बाद नियुक्त किया गया था या अवैध रूप से नियुक्त किया गया था। यह भी तर्क दिया गया है कि सरकार का दूसरा निर्णय दिनांक 18.12.1989 निर्वाचित सरकार के परिवर्तन के बाद लिया गया था एवं इसे मंत्रिपरिषद की पूर्व स्वीकृति नहीं मिली थी। 18.12.1989 का उक्त निर्णय, जिसे मुख्यमंत्री के अनुमोदन से एवं मंत्रिमंडल की ओर से जारी किया गया माना जाता है, सरकार का वैध संकल्प नहीं माना जा सकता। चूँकि यह औपचारिक रूप से भारत के संविधान के अनुच्छेद 166 के अनुसार राज्यपाल के नाम से नहीं लिया गया है एवं व्यक्त नहीं किया गया है, इसलिए यह राज्य सरकार पर बाध्यकारी नहीं है। इसलिए, राज्य की ओर से यह तर्क दिया गया है कि उच्च न्यायालय ने पूर्व संबद्ध महाविद्यालयों के कर्मचारियों के संघ द्वारा दायर रिट याचिका को स्वीकार करने एवं संबंधित विश्वविद्यालयों को अधिनियम की धारा 4(1)(14) के अनुसार परिवर्तित घटक महाविद्यालयों में कर्मचारियों के समामेलन हेतु संबद्ध महाविद्यालयों में सभी नियुक्तियों की नियमितता या अन्यथा की पुनः जांच करने का निर्देश देने में गंभीर त्रुटि की है।

शिक्षकों एवं कर्मचारियों की ओर से, विद्वान अधिवक्ता, जो उन मामलों में अलग-अलग उपस्थित हुए, जिनमें वे शामिल हैं, ने अधिनियम की धारा 4(1)(14) एवं धारा 35 के

प्रावधानों की व्याख्या पर अलग-अलग दृष्टिकोण प्रस्तुत करते हुए तर्क प्रस्तुत किए। मूलतः, प्रस्तुत किया गया सामान्य तर्क यह है कि धारा 4(1)(14), जो संबद्ध महाविद्यालयों की नियुक्तियों की नियमितता या अन्यथा की समीक्षा करने एवं निर्णय लेने की विश्वविद्यालय की शक्तियों से संबंधित है, विश्वविद्यालयों द्वारा उन्हें घटक महाविद्यालयों के रूप में अपने अधीन कर लेने के बाद, इसके परंतुक में निहित गैर-बाधा खंड के परिणामस्वरूप, उक्त प्रावधान को धारा 35 पर एक अधिभावी प्रभाव प्रदान करता है। यह तर्क दिया गया है कि राज्य सरकार को संबद्ध महाविद्यालयों में कार्यरत कर्मचारियों के स्वीकृत पदों के विरुद्ध या उन पदों के विरुद्ध जिनके सृजन की स्वीकृति महाविद्यालयों के अधिग्रहण की तिथि तक विश्वविद्यालय या राज्य सरकार के पास लंबित थी, आमेसन के मामले में विश्वविद्यालय की शक्ति का उपयोग करने की अनुमति नहीं दी जा सकती। विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री रंजीत कुमार ने धारा 4(1) के खंड 14 एवं धारा 35 का पाठ पढ़कर उपर्युक्त दोनों धाराओं में गैर-बाधा वाले खंडों में प्रयुक्त भिन्न भाषा पर प्रकाश डाला। यह इंगित किया गया है कि धारा 4(1) के खंड 14 के परंतुक में गैर-बाधा वाले खंड में 'इस अधिनियम में निहित किसी भी प्रतिकूल बात के होते हुए भी' अभिव्यक्ति का प्रयोग किया गया है, जबकि धारा 35 के आरंभिक भाग में गैर-बाधा वाले खंड में 'इस अधिनियम में निहित किसी भी प्रतिकूल बात के होते हुए भी' अभिव्यक्ति का प्रयोग किया गया है। धारा 4(1)(14) एवं धारा 35 में गैर-बाधा खंडों की दो अभिव्यक्तियों में उपरोक्त अंतर को इंगित करते हुए, प्रस्तुत तर्क यह है कि संबद्ध महाविद्यालयों के शिक्षकों के सम्मेलन के विषय पर, जिन्हें संघटक महाविद्यालयों में परिवर्तित किया गया है, धारा 4(1)(14) धारा 35 को अधिरोहित करती है एवं इसलिए, उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्देश बनाए रखने योग्य हैं।

धारा 4(1)(14) एवं धारा 35 की व्याख्या के प्रश्न एवं राज्य एवं विश्वविद्यालय के पूर्व संबद्ध महाविद्यालयों के कर्मचारियों के संघटक महाविद्यालयों में रूपांतरण के संबंध में उनकी शक्तियों के संबंध में परस्पर विरोधी दावों पर निर्णय लेने के लिए, अधिनियम के अन्य

प्रावधानों के आलोक में इन दोनों प्रावधानों की गहन जाँच आवश्यक हो जाती है। धारा 35 अनिवार्य शब्दों में निहित है। यह किसी भी संबद्ध महाविद्यालय को वित्तीय दायित्वों से संबंधित कोई शिक्षण या गैर-शिक्षण पद सृजित करने या राज्य सरकार के पूर्व अनुमोदन के बिना ऐसे पद पर कोई नियुक्ति करने से प्रतिबंधित करती है। इस प्रावधान की तुलना में, धारा 4(1) का खंड 14 विश्वविद्यालय को, सरकार से अनुमोदन प्राप्त करने के बाद या राज्य सरकार के प्रस्तावों के आधार पर, किसी भी 'संस्था' संबद्ध या असंबद्ध का अधिग्रहण करने का अधिकार देता है। विश्वविद्यालयों को किसी भी संस्थान का अधिग्रहण करने में सक्षम बनाने के उद्देश्य से ही उसे ऐसे संस्थान के शासी एवं/या प्रबंध निकाय के साथ समझौता करने का अधिकार दिया गया है। ऐसा समझौता करने के बाद, खंड 4 के प्रावधान द्वारा विश्वविद्यालय को उस संस्थान में की गई नियुक्तियों की समीक्षा करने एवं नियुक्तियों की नियमितता या अन्यथा के संबंध में निर्णय लेने का अधिकार दिया गया है। उपर्युक्त संबंध में विश्वविद्यालय का निर्णय 'अंतिम एवं बाध्यकारी' माना जाएगा।

धारा 4(1)(14) के गैर-बाधक खंडों एवं धारा 35 के कुछ हद तक समान खंड में प्रयुक्त भाषा में अंतर को ध्यान में रखते हुए, हम पाते हैं कि विधायिका एक प्रावधान को दूसरे पर अधिभावी प्रभाव देने का इरादा रखती है। धारा 4(1) के खंड 14 के परंतुक में 'इस अधिनियम में निहित किसी भी प्रतिकूल बात के होते हुए भी' अभिव्यक्ति का प्रयोग किया गया है, जबकि धारा 35 के आरंभिक भाग में 'इस अधिनियम में निहित किसी भी प्रतिकूल बात के होते हुए भी' अभिव्यक्ति का प्रयोग किया गया है।

एक गैर-बाधा खंड आम तौर पर किसी धारा में इस उद्देश्य से जोड़ा जाता है कि धारा के अधिनियमित भाग को, विरोध की स्थिति में, गैर-बाधा खंड में उल्लिखित उसी या अन्य अधिनियम के प्रावधान पर अधिभावी प्रभाव प्रदान किया जा सके। यह कहने के समतुल्य है कि *गैर-बाधा* खंड में उल्लिखित प्रावधानों या अधिनियम के बावजूद, उसके बाद आने वाले प्रावधान का पूर्ण संचालन होगा या गैर-बाधा खंड में शामिल प्रावधान उस अधिनियम या

उस प्रावधान के संचालन में बाधा नहीं बनेंगे जिसमें गैर-बाधा खंड आता है। [देखें 'वैधानिक व्याख्या के सिद्धांत', न्यायमूर्ति जी.पी. सिंह द्वारा 9वां संस्करण, अध्याय V, सारांश IV, पृष्ठ 318 एवं 319 पर]

जब दो या दो से अधिक कानून या प्रावधान एक ही क्षेत्र में लागू होते हैं एवं प्रत्येक में एक गैर-बाधक खंड होता है जो यह बताता है कि उसका प्रावधान किसी अन्य प्रावधान या कानून के प्रावधानों को अधिरोहित करेगा, तो व्याख्या की उत्तेजक एवं जटिल समस्याएँ उत्पन्न होती हैं। व्याख्या की ऐसी समस्याओं के समाधान में, गैर-बाधक खंड वाले दो प्रावधानों में से प्रत्येक के उद्देश्य एवं प्रयोजन का उल्लेख करने के अलावा कोई भी स्थापित सिद्धांत लागू नहीं किया जा सकता है। एक ही अधिनियम के दो प्रावधानों, जिनमें प्रत्येक में एक गैर-बाधक खंड है, के लिए एक ही अधिनियम के दो परस्पर विरोधी प्रतीत होने वाले प्रावधानों की एक अनौपचारिक व्याख्या की आवश्यकता होती है। इस कठिन अभ्यास में, दो प्रावधानों के उद्देश्य एवं प्रयोजन एवं प्रत्येक में प्रयुक्त भाषा को प्रभावी बनाने पर उचित विचार करना शामिल है। [प्रासंगिक चर्चा के लिए श्री स्वर्ण सिंह एवं अन्य बनाम श्री कस्तूरी लाल, [1977] 1 धारा 750 के कंडिका 20 देखें]

सामान्यतः विधानमंडल द्वारा किसी वैधानिक प्रावधान में 'इस अधिनियम में निहित किसी भी विपरीत बात के होते हुए भी' जैसे वाक्यांश का प्रयोग यह कहने के समतुल्य है कि अधिनियम उपाय में कोई बाधा नहीं बनेगा [देखें कानून शब्दकोश शब्द 'इस अधिनियम में निहित किसी भी विपरीत बात के होते हुए भी']। ऐसी अभिव्यक्ति का प्रयोग यह कहने का एक एवं तरीका है कि जिस प्रावधान में गैर-बाधा खंड आता है, वह आमतौर पर अधिनियम के अन्य प्रावधानों पर प्रबल होगा। इस प्रकार, गैर-बाधा खंडों को हमेशा निरसन खंड के रूप में नहीं माना जाना चाहिए एवं न ही ऐसे खंडों के रूप में जो कानून के किसी अन्य प्रावधान को स्पष्ट रूप से या पूरी तरह से अधिरोहित करते हैं, बल्कि केवल ऐसे खंडों के रूप में माना जाना चाहिए जो किसी अन्य कानून के प्रावधानों से उत्पन्न होने वाली

सभी बाधाओं को दूर करते हैं जो उस मूल अधिनियमित प्रावधान के संचालन के रास्ते में उत्पन्न हो सकती हैं जिससे गैर-बाधा खंड संलग्न है। [देखें बिपथुम्मा एवं अन्य। बनाम मरियम बीबी (1966) 1 मैसूर लॉ जर्नल पृष्ठ 162 एवं पृष्ठ 165 पर]

यदि हम अधिनियम की योजना एवं दोनों प्रावधानों के उद्देश्य की जाँच करें, तो वे दो अलग-अलग क्षेत्रों में कार्य करते प्रतीत होते हैं एवं उनमें कोई विरोधाभास नहीं है। धारा 35 संबद्ध महाविद्यालयों पर स्पष्ट रूप से लागू है एवं यह आदेश देती है कि वित्तीय देनदारियों को जन्म देने वाले नए पदों का सृजन नहीं किया जा सकता है एवं उनके विरुद्ध नियुक्तियाँ राज्य सरकार की पूर्व स्वीकृति के बिना नहीं की जा सकती हैं।

इसके विपरीत, धारा 4(1) का खंड 14 एक बिल्कुल अलग क्षेत्र में कार्य करता है अर्थात्, जहाँ सरकार द्वारा स्वीकृति प्रदान किए जाने पर या राज्य सरकार से प्रस्ताव प्राप्त होने पर, विश्वविद्यालय किसी संबद्ध या असंबद्ध संस्थान के साथ उसकी परिसंपत्तियों एवं देनदारियों सहित उसका प्रबंधन अपने हाथ में लेने के लिए समझौता करता है। ऐसे संस्थानों के संबंध में, जिनका उनमें कार्यरत कर्मचारियों सहित अधिग्रहण किया जाता है, विश्वविद्यालय को - ऐसे संस्थान में की गई नियुक्तियों की समीक्षा करने एवं कर्मचारियों के समामेलन के संबंध में निर्णय लेने का विशेष अधिकार दिया गया है, जिसमें उनकी नियुक्तियों की नियमितता या अन्यथा को ध्यान में रखा जाता है। धारा 4(1) का खंड 14, अपनी भाषा के अनुसार, ऐसे संस्थानों का भी अधिग्रहण करने का प्रावधान करता है जहाँ कर्मचारी पदों की वैध स्वीकृति के बिना कार्यरत या कार्यरत हो सकते हैं। विश्वविद्यालय को ऐसी नियुक्तियों की समीक्षा करने एवं ऐसे कर्मचारियों के आमेलन पर विचार करने का अधिकार है। 'इस अधिनियम में निहित किसी भी विपरीत बात के होते हुए भी' अभिव्यक्ति का प्रयोग करने वाले गैर-बाधक खंड को खंड 14 में प्रयुक्त स्पष्ट भाषा द्वारा दर्शाए गए उपरोक्त उद्देश्य एवं प्रयोजन के साथ व्याख्यायित एवं प्रभावी किया जाना है, जो विश्वविद्यालय

को न केवल संस्थान की परिसंपत्तियों एवं देनदारियों का बल्कि नियमित रूप से या अन्यथा नियुक्त कर्मचारियों का भी अधिग्रहण करने में सक्षम बनाता है।

धारा 35 सभी 'संबद्ध महाविद्यालयों' पर लागू होती है, लेकिन उस स्थिति को कवर नहीं करती जब किसी 'संबद्ध महाविद्यालय' को राज्य सरकार की मंजूरी या प्रस्ताव पर विश्वविद्यालय द्वारा 'संघटक महाविद्यालय' के रूप में अधिग्रहण करने का प्रस्ताव किया जाता है। परिसंपत्तियों, देनदारियों एवं कर्मचारियों से संबद्ध या असंबद्ध संस्थानों के अधिग्रहण का विषय केवल धारा 4(1) के खंड 14 के प्रावधानों द्वारा विनियमित होता है। अधिनियम की धारा 35, जिसमें पदों के सृजन या उनके विरुद्ध नियुक्तियों के लिए पूर्व अनुमोदन प्राप्त करने की आवश्यकता होती है, का उद्देश्य उन संस्थानों के शासी निकायों के साथ किए गए समझौते की शर्तों के अनुसार अधिग्रहित संस्थानों के कर्मचारियों को समाहित करने में विश्वविद्यालय की शक्तियों को प्रतिबंधित करना नहीं है। यह अलग बात है कि गैर-संबद्ध या संबद्ध संस्थान के कर्मचारियों को ऐसे संस्थान के शासी निकायों या प्रबंधन के साथ किए जाने वाले समझौते के तहत समाहित करने का निर्णय लेते समय, विश्वविद्यालय नियुक्तियों की वैधता या अन्यथा पर उचित ध्यान दे सकता है, जहाँ संस्थान एक संबद्ध महाविद्यालय है एवं नियुक्त व्यक्तियों की योग्यताएँ। विश्वविद्यालय धारा 35 के प्रावधानों पर भी विचार कर सकता है ताकि यह तय किया जा सके कि राज्य सरकार के पूर्व अनुमोदन के बिना पदों के विरुद्ध की गई कोई नियुक्ति समाहित के लिए मान्य होनी चाहिए या नहीं।

राज्य की ओर से तर्क के दौरान, यह आग्रह किया गया कि धारा 35 में पदों के सृजन एवं उनके विरुद्ध नियुक्तियों के लिए पूर्व अनुमोदन की आवश्यकता वाला प्रावधान अनिवार्य प्रकृति का है एवं कोई पूर्वव्यापी अनुमोदन नहीं दिया जा सकता।

दूसरी ओर, कर्मचारियों की ओर से, विद्वान अधिवक्ता ने तर्क दिया है कि अधिनियम के अन्य प्रावधानों, विशेष रूप से नियमित रूप से नियुक्त या अन्यथा मौजूदा कर्मचारियों के समामेलन की अनुमति देने वाले प्रावधानों को देखते हुए, धारा 35 में 'पूर्व अनुमोदन' की

आवश्यकता वाले प्रावधान को केवल निर्देशिका के रूप में समझा जाना चाहिए, जिसका अर्थ है कि यह राज्य सरकार को किसी पद के सृजन एवं उसके विरुद्ध की गई नियुक्ति के लिए पूर्वव्यापी अनुमोदन देने से नहीं रोकता है।

हम इस बारे में कोई अंतिम राय व्यक्त करना आवश्यक नहीं समझते कि संबद्ध महाविद्यालयों में पदों के सृजन एवं नियुक्तियों के लिए धारा 35 में निहित 'पूर्व अनुमोदन' का प्रावधान अनिवार्य है या निर्देशिका। इस मामले के प्रयोजनार्थ, हमारे लिए यह कहना पर्याप्त है कि धारा 4(1) का खंड 14, किसी संस्थान में नियमित रूप से या अन्यथा नियुक्त कर्मचारियों के आमेलन पर विचार करने एवं निर्णय लेने के अनन्य क्षेत्र में कार्य करता है जिसमें एक संबद्ध या असंबद्ध महाविद्यालय भी शामिल है जिसे विश्वविद्यालय एवं उस महाविद्यालय के शासी निकाय के बीच हुए एक औपचारिक समझौते के तहत 'घटक महाविद्यालय' के रूप में ग्रहण किया जाना है। संबद्ध या असंबद्ध महाविद्यालय के प्रबंधन, परिसंपत्तियों, देनदारियों एवं कर्मचारियों के आमेलन की प्रक्रिया में, विश्वविद्यालय को मौजूदा कर्मचारियों के आमेलन के संबंध में निर्णय लेना होता है। आमेलन पर विचार करने की इस प्रक्रिया में, अधिनियम की धारा 35 के प्रावधानों के पालन सहित अधिनियम के प्रावधानों को ध्यान में रखा जा सकता है। अधिग्रहीत महाविद्यालयों के कर्मचारियों के आमेलन के मामले में, पदों के सृजन एवं उन पर नियुक्तियों से पहले धारा 35 के तहत पूर्व अनुमोदन प्राप्त करने के कथित अनिवार्य प्रावधान का कथित रूप से पालन न करना, विश्वविद्यालय द्वारा किसी पद के विरुद्ध कार्यरत किसी कर्मचारी के आमेलन की अनुमति देने में बाधा नहीं होगी। उपरोक्त उद्देश्य के लिए, वह राज्य सरकार से पूर्वव्यापी अनुमोदन प्राप्त कर सकता है। सरकार के दिनांक 18.12.1989 के संचार में निहित निर्णय स्वयं उस पद के विरुद्ध कार्यरत कर्मचारियों के आमेलन पर विचार करने की अनुमति देता है, जिसके लिए पदों के सृजन की मंजूरी विश्वविद्यालय की सिफारिशों पर राज्य सरकार के पास लंबित थी। हमें धारा 4(1)(14) एवं धारा 35 के प्रावधानों में कोई विरोधाभास नहीं दिखता, हालाँकि दोनों में एक गैर-बाधक

खंड शामिल है। ये दोनों एक-दूसरे को विशेष रूप से सौंपे गए क्षेत्र में एक-दूसरे को दरकिनार करने का इरादा रखते हैं। सामान्य परिस्थितियों में, संबद्ध महाविद्यालयों में नियुक्तियाँ धारा 35 के अनुसार राज्य सरकार के पूर्व अनुमोदन से होनी चाहिए, लेकिन अधिनियम की धारा 4(1)(14) के अनुसार, अधिग्रहीत कर्मचारियों की सेवाओं के आमेलन का विषय संबंधित विश्वविद्यालय के अनन्य अधिकार क्षेत्र में होगा।

थोड़े अलग शब्दों वाले दो गैर-बाधा खंडों की इस प्रकार सामंजस्यपूर्ण ढंग से व्याख्या की जानी चाहिए ताकि उनमें से प्रत्येक का उद्देश्य पूरा हो सके। अधिनियम की योजना एवं संबंधित प्रावधानों की जाँच करने पर, हम पाते हैं कि धारा 35, जिसमें पदों के सृजन एवं नियुक्तियों के लिए राज्य सरकार की पूर्व स्वीकृति आवश्यक है, सभी संबद्ध महाविद्यालयों पर लागू होती है। धारा 35 की तुलना में - धारा 4(1)(14) का प्रभाव उस स्तर तक सीमित है जब विश्वविद्यालय अपने प्रबंधन, परिसंपत्तियों, देनदारियों एवं कर्मचारियों को अपने अधीन करने के लिए संबद्ध या असंबद्ध निजी संस्थानों के प्रबंधन या शासी निकायों के साथ समझौता करता है। धारा 4(1)(14) में गैर-बाधा खंड का प्रभाव यह है कि प्रस्तावित संस्थान/कॉलेज के कर्मचारियों के आमेलन का मामला उस संबंधित विश्वविद्यालय की एकमात्र शक्ति एवं अधिकार क्षेत्र में होगा जिसके अधिकार क्षेत्र में संबद्ध कॉलेज या संस्थान आता है। आमेलित संस्थानों के कर्मचारियों के आमेलन के मामले में, पदों के सृजन एवं नियुक्ति के लिए राज्य सरकार की पूर्व मंजूरी या अनुमोदन की आवश्यकता वाली धारा 35, विश्वविद्यालय की शक्ति पर कोई बाधा नहीं होगी। यह अलग बात है कि विश्वविद्यालय, आमेलित संस्थान के कर्मचारियों के आमेलन पर विचार करते समय, किसी विशेष नियुक्ति की वैधता/नियमितता या अन्यथा पर उचित विचार कर सकता है, लेकिन अधिनियम की धारा 35 में परिकल्पित राज्य की पूर्व मंजूरी या अनुमोदन के अभाव में इसमें बाधा नहीं आएगी। इस प्रकार दोनों गैर-बाधा खंडों को सामंजस्यपूर्ण रूप से व्याख्यायित एवं लागू किया जाना चाहिए ताकि प्रत्येक को अधिभावी प्रभाव दिया जा सके एवं प्रत्येक को सौंपे

गए अनन्य क्षेत्र के भीतर उनके संचालन को प्रतिबंधित किया जा सके। सामान्य परिस्थितियों में, संबद्ध महाविद्यालयों में पदों के सृजन एवं नियुक्तियों के मामले में, धारा 35 में निहित राज्य सरकार की पूर्व मंजूरी या अनुमोदन की आवश्यकता को समाप्त नहीं किया जा सकता है, क्योंकि धारा 4(1)(14) में विपरीत प्रावधान निहित है एवं बाद वाली धारा अपने संचालन में विश्वविद्यालय द्वारा अधिग्रहित संस्थान के कर्मचारियों के अवशोषण तक सीमित है।

धारा 57 ए की उपधारा (2) में खंड (सी) अधिनियम 3 द्वारा जोड़ा गया था। 1990 के अधिनियम द्वारा इसका कोई पूर्वव्यापी प्रभाव नहीं है एवं यह उन संबद्ध महाविद्यालयों के मामलों पर लागू नहीं होता है जिन्हें वर्ष 1990 से पहले घटक महाविद्यालयों के रूप में अधिग्रहित किया गया था। धारा 57 ए की उपधारा (2) के उक्त खंड (सी) के अनुसार, संबद्ध महाविद्यालयों के शिक्षकों की सेवाओं को घटक महाविद्यालयों में परिवर्तित करने से पहले बिहार राज्य विश्वविद्यालय [घटक कॉलेज] सेवा आयोग की स्वीकृति आवश्यक है। इस अधिनियम में संशोधन करने वाले उपरोक्त पश्चात विधान को अधिनियम के अपरिवर्तित प्रावधानों की व्याख्या में सहायक माना जा सकता है। अधिनियम के संशोधित प्रावधान इस बात का संकेत हैं कि अधिग्रहित संबद्ध महाविद्यालयों के कर्मचारियों के आमेदन का विषय संबद्ध महाविद्यालयों में पदों पर नियमित भर्ती से अलग माना जाएगा जो राज्य सरकार की पूर्व स्वीकृति या अनुमोदन से की जानी है जैसा कि अधिनियम की धारा 35 में प्रावधान है। इसी प्रकार, 1993 के अधिनियम 17 द्वारा धारा 35 में जोड़ी गई उप-धारा (3) भी लागू होने की संभावना है एवं इसका 1993 से पहले घटक महाविद्यालयों के रूप में अधिग्रहीत संबद्ध महाविद्यालयों के शिक्षण कर्मचारियों की सेवाओं के आमेदन पर कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेगा। उपधारा (3) संबद्ध महाविद्यालयों के कर्मचारियों [शिक्षण या गैर-शिक्षण] की भर्ती के सामान्य तरीके पर लागू होती है एवं यह केवल इस कानूनी स्थिति की पुनरावृत्ति है कि अधिनियमों, कानूनों, नियमों एवं विनियमों के प्रावधानों के विपरीत की गई नियुक्तियाँ एवं

पदोन्नतियाँ अमान्य होंगी एवं किसी भी समय समाप्त की जा सकती हैं। इसमें यह भी प्रावधान है कि विश्वविद्यालय द्वारा ऐसी अवैध, अनियमित, अनधिकृत नियुक्तियों/पदोन्नतियों के विरुद्ध किया गया कोई भी व्यय, ऐसी अवैधता के लिए जिम्मेदार पाए गए अधिकारियों से, लोक मांग वसूली अधिनियम, 1914 के प्रावधानों के तहत सार्वजनिक मांग के रूप में वसूल किया जाएगा। धारा 57 ए (2) का खंड (सी), जो वर्ष 1990 में लागू किया गया था, एवं धारा 35 की उपधारा (3), जो वर्ष 1993 में लागू की गई थी, भविष्य में लागू होने के कारण, उन संबद्ध महाविद्यालयों पर लागू नहीं होती हैं जिन्हें वर्ष 1990 से पहले के मौजूदा कर्मचारियों के साथ घटक महाविद्यालयों के रूप में अधिग्रहित किया गया था। वर्ष 1990 एवं 1993 में बाद में लागू किए गए उन प्रावधानों का उल्लेख सीमित उद्देश्य से किया जा रहा है ताकि यह दर्शाया जा सके कि विधानमंडल ने संबद्ध महाविद्यालयों में शिक्षण एवं गैर-शिक्षण पदों पर राज्य सरकार के अनुमोदन से की जाने वाली सामान्य भर्ती एवं संबद्ध महाविद्यालयों में स्वीकृत या गैर-स्वीकृत पदों पर नियुक्त मौजूदा कर्मचारियों के समामेलन के मामले को हमेशा अलग तरह से देखा है।

दो गैर-बाधक खंड, यद्यपि थोड़े अलग शब्दों में लिखे गए हैं - एक धारा 4(1)(14) के प्रावधान में एवं दूसरा अधिनियम की धारा 35 में - इस प्रकार, सामंजस्यपूर्ण रूप से व्याख्यायित किए गए हैं। हमारा निष्कर्ष यह है कि ये प्रावधान दो अलग-अलग क्षेत्रों में लागू होते हैं: पहला, अधिग्रहित महाविद्यालयों के कर्मचारियों के समायोजन पर विचार करने से संबंधित है, एवं दूसरा, संबद्ध महाविद्यालयों से संबंधित है, जब विश्वविद्यालय द्वारा उनके अधिग्रहण का कोई प्रस्ताव नहीं होता है। चूंकि ये दोनों प्रावधान दो अलग-अलग स्थितियों एवं क्षेत्रों में लागू होने के लिए बनाए गए हैं, इसलिए दोनों एक दूसरे पर अधिभावी हैं। इसीलिए विधानमंडल ने प्रत्येक प्रावधान में एक गैर-बाधा खंड का प्रयोग किया है।

राज्य सरकार द्वारा समय-समय पर लिए गए विभिन्न निर्णयों के आधार पर, जिनका उल्लेख ऊपर किया जा चुका है, दिनांक 01.2.1988 को पारित आदेश के अनुसार, राज्य

सरकार ने अतिरिक्त पदों के सृजन के प्रस्तावों एवं संबद्धता के प्रस्तावों पर विचार करने के लिए गठित समिति की सिफारिशों पर, जो विश्वविद्यालयों से 30.4.1986 तक प्राप्त हुए थे, प्रस्तावों को स्वीकृति देने का निर्णय लिया।

बिहार एवं झारखंड राज्य की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ताओं ने तर्क दिया है कि दिनांक 01.02.1988 का वह आदेश, जिसमें राज्य सरकार द्वारा गठित समिति की सिफारिश पर निर्धारित तिथि से पहले विश्वविद्यालयों को प्राप्त कुछ पदों के लिए स्वीकृति एवं संबद्धता प्रदान की गई थी, सरकार द्वारा पदों की स्वीकृति का वैध आदेश नहीं माना जा सकता, क्योंकि इसे मंत्रिमंडल की मंजूरी नहीं मिली थी। यह निवेदन किया गया है कि दिनांक 01.02.1988 का आदेश बिहार सरकार के उप सचिव द्वारा मंत्रिमंडल की किसी भी मंजूरी के बिना जारी किया गया था। इसका कोई कानूनी महत्व नहीं है। भारत के संविधान के अनुच्छेद 166 के अनुसार, सरकार के किसी भी वैध आदेश को राज्यपाल के नाम से औपचारिक रूप से व्यक्त किया जाना आवश्यक है।

दिनांक 18.12.1989 के आदेश के विरुद्ध भी इसी प्रकार की आपत्ति उठाई गई है, जिसके द्वारा गठित समिति की सिफारिशों पर भरोसा करते हुए, राज्य सरकार ने निर्धारित तिथि से पहले स्वीकृत एवं अनुशंसित पदों पर कार्यरत कर्मचारियों को समायोजित करने का निर्देश दिया था।

राज्य सरकार के दिनांक 01.2.1988 एवं 18.12.1989 के दो आदेशों की वैधता एवं प्रामाणिकता पर परिवर्तित घटक महाविद्यालयों के कर्मचारियों द्वारा दायर रिट याचिका में उच्च न्यायालय के समक्ष प्रश्न नहीं उठाया गया था। उनकी वैधता पर प्रश्न केवल न्यायमूर्ति एस. सी. अग्रवाल [सेवानिवृत्त] की अध्यक्षता में गठित एक सदस्यीय जांच आयोग के समक्ष उठाया गया था। दिनांक 01.2.1988 के आदेश की वैधता के प्रश्न पर, जांच आयोग ने सरकारी फाइलों में दर्ज टिप्पणियों की गहन जांच की एवं पाया कि शिक्षा मंत्री ने एक फाइल में यह दर्ज किया था कि 22.6.1988 को हुई मंत्रिमंडल की बैठक में मुख्यमंत्री को

इस संबंध में निर्णय लेने के लिए अधिकृत किया गया था। आयोग के अनुसार, दिनांक 01.2.1988 का आदेश राज्य सरकार का विधिवत प्राधिकृत आदेश है एवं यह तथ्य बाद के संकल्प संख्या 307 दिनांक 08.3.1988 से स्पष्ट है, जो बिहार के राज्यपाल के नाम से जारी विधिवत प्रमाणित आदेश है। राज्यपाल के नाम से औपचारिक रूप से जारी किया गया बाद का संकल्प दिनांक 01.2.1988 के आदेश का अनुवर्ती है एवं इसे बाधित नहीं करता है।

जहां तक राज्य सरकार के दिनांक 18.12.1989 के उस आदेश का संबंध है जिसमें समिति द्वारा स्वीकृत एवं अनुशंसित पदों के विरुद्ध कर्मचारियों के समायोजन का निर्देश दिया गया था, आयोग ने उस प्रश्न पर विचार नहीं किया, यह कहते हुए कि यह वर्तमान लंबित अपील में इस न्यायालय के समक्ष निर्णय का विषय है।

चूंकि दिनांक 1.2.1988 एवं 18.12.1989 के दो आदेशों की वैधता एवं प्रामाणिकता का मुद्दा उच्च न्यायालय के समक्ष नहीं उठाया गया था एवं पहली बार आयोग के समक्ष उठाया गया था, इसलिए हम इन पर विचार नहीं करेंगे। बिहार राज्य एवं झारखंड राज्य की ओर से इस न्यायालय के समक्ष लिया गया संयुक्त रुख अस्वीकार्य है।

इसके अलावा आयोग ने इस तथ्य पर भी ध्यान दिया है कि दिनांक 01.2.1988 के आदेश के बाद दिनांक 08.3.1988 को औपचारिक संकल्प संख्या 307 पारित किया गया था, जो बिहार के राज्यपाल के नाम से विधिवत प्रमाणित आदेश था एवं इसने दिनांक 01.2.1988 के आदेश को निरस्त नहीं किया। यह संकल्प औपचारिक रूप से बिहार सरकार के नाम से लिया गया एवं व्यक्त किया गया था, जो भारत के संविधान के अनुच्छेद 166 के अनुसार दिनांक 01.2.1988 को पारित आदेश को प्रभावी बनाने के लिए था।

जहाँ तक 18.12.1989 के आदेश का संबंध है, राज्य उस निर्णय का लेखक है, केवल इसलिए कि यह औपचारिक रूप से भारत के संविधान के अनुच्छेद 166 के अनुसार राज्यपाल के नाम से व्यक्त नहीं किया गया है, राज्य को स्वयं उस निर्णय से पीछे हटने या उसे वापस लेने की अनुमति नहीं दी जा सकती। केवल निर्वाचित सरकार को बदलने से

पिछली निर्वाचित सरकार के निर्णयों का अनादर करना उचित नहीं है। यदि दिनांक 01.2.1988 एवं 18.12.1989 के आदेशों में निहित दोनों निर्णय नव निर्वाचित सरकार को स्वीकार्य नहीं थे, तो सरकार के पास उन्हें औपचारिक रूप से वापस लेने या निरस्त करने का विकल्प था। दिनांक 01.2.1988 एवं 18.12.1989 के दोनों आदेशों को वापस न लेने या निरस्त न करने की स्थिति में, बिहार राज्य एवं झारखंड राज्य (जो बिहार राज्य के पुनर्गठन के बाद गठित हुआ है) के लिए यह तर्क देना उचित नहीं है कि वे निर्णय उन पर बाध्यकारी नहीं हैं।

वर्ष 2002 का विशेष अवकाश याचिका (दीवानी) संख्या 18168

यह विशेष अनुमति याचिका पटना उच्च न्यायालय की खंडपीठ के एक आदेश के विरुद्ध दायर की गई है, जिसके अनुसार अपीलकर्ता के सेवानिवृत्ति बकाया के दावे का भुगतान, पूर्ववर्ती संबद्ध महाविद्यालयों के शिक्षण स्टाफ के सदस्य के रूप में, जो घटक महाविद्यालयों में परिवर्तित हो गए थे, इस न्यायालय के समक्ष लंबित वर्तमान अपील के परिणाम के अधीन रहते हुए, उन्हें किया जाना चाहिए।

जैसा कि हमने ऊपर कहा है, विश्वविद्यालय को जाँच आयोग के निष्कर्षों के आधार पर, पुनः परीक्षण शुल्क के दावे पर निर्णय लेना है। विश्वविद्यालय संबंधित महाविद्यालय में अपीलकर्ता की नियुक्ति की नियमितता या अन्यथा के प्रश्न की जाँच करेगा एवं यदि वह समाहित होने का हकदार पाया जाता है, तो विश्वविद्यालय उसे पुनः परीक्षण शुल्क का भुगतान करेगा। इस प्रकार, चंद्र किशोर शर्मा की विशेष अनुमति याचिका उपरोक्त निर्देशों के साथ निस्तारित की जाती है।

अवमानना याचिका (दीवानी) संख्या वर्ष 2002 का 5, 53, 54, 83, 353, 363, 549, 82 एवं वर्ष 2004 का 343, 377, 441, वर्ष 1997 का सीए संख्या 6098

अवमानना याचिकाएं कर्मचारियों द्वारा व्यक्तिगत रूप से एवं संयुक्त रूप से दायर की गई हैं। इनमें से कई तो उच्च न्यायालय के समक्ष पक्षकार भी नहीं थे। वे इस न्यायालय के

आदेश का पालन न करने की शिकायत करते हैं। न्यायमूर्ति एस.सी. अग्रवाल (इस न्यायालय के सेवानिवृत्त न्यायाधीश) की अध्यक्षता में गठित जांच आयोग के बाद, कर्मचारियों को इस अपील के निर्णय लंबित रहने तक उनके वेतन के साथ-साथ स्वीकार्य भत्ते का भुगतान करने का निर्देश दिया गया था।

राज्य के अधिकारियों (जिन पर अवमानना का आरोप है) द्वारा दायर प्रति-हलफनामे में बचाव यह है कि चूंकि विभिन्न संबद्ध महाविद्यालयों में नियुक्तियों एवं कर्मचारियों के समायोजन की वैधता का प्रश्न जांच आयोग एवं इस न्यायालय के समक्ष जांच के अधीन था, इसलिए राज्य के लिए ऐसे व्यक्तियों को वेतन का भुगतान करना संभव नहीं था जिनकी नियुक्ति ही गंभीर संदेह में थी। आयोग ने अभिलेखों में कई हेरफेर एवं प्रविष्टियाँ भी पाई हैं। यह निवेदन किया जाता है कि उपरोक्त परिस्थितियों में, ऐसे कर्मचारियों को वेतन का भुगतान न करना, जिनकी नियुक्तियाँ स्वयं गंभीर संदेह में थीं, जानबूझकर की गई अवमानना नहीं मानी जा सकती जिसके लिए कोई दंडात्मक कार्रवाई की जाए। अवमानना याचिकाकर्ताओं द्वारा लिया गया रुख उचित एवं न्यायसंगत प्रतीत होता है। ऐसे कर्मचारियों को वेतन का भुगतान नहीं किया जा सकता था जिनकी नियुक्तियाँ गंभीर संदेह में थीं। हमें अधिकारियों के विरुद्ध कोई दंडात्मक कार्रवाई करने का कोई ठोस आधार नहीं मिलता। अतः अवमानना याचिकाएँ खारिज की जाती हैं।

अभियोग/हस्तक्षेप के लिए:

कर्मचारियों द्वारा व्यक्तिगत एवं सामूहिक रूप से बड़ी संख्या में आवेदन दाखिल किए गए हैं, जिनमें आयोग की प्रतिवेदन पर आपत्ति जताई गई है, क्योंकि यह प्रतिवेदन उनकी स्थिति, स्थायी नियुक्ति के अधिकार एवं वेतन भुगतान को प्रतिकूल रूप से प्रभावित करती है। विभिन्न आवेदनों के माध्यम से, उन्होंने हमारे समक्ष अपीलों में पक्षकार के रूप में शामिल होने की मांग की है एवं जांच प्रतिवेदन पर आपत्ति दर्ज कराई है। हमने सभी लिखित आपत्तियों एवं उनके समर्थन में प्रस्तुत दलीलों पर विचार किया है। व्यक्तिगत

कर्मचारियों द्वारा स्वतंत्र रूप से या अपने संगठनों के माध्यम से दी गई अधिकांश लिखित आपत्तियां मुख्य रूप से राज्य सरकार द्वारा गठित समितियों की रिपोर्टें एवं संबंधित विश्वविद्यालयों द्वारा स्थायी नियुक्ति के लिए की गई सिफारिशों पर आधारित हैं।

हमने ऊपर उल्लेख किया है कि इस न्यायालय ने इस न्यायालय के सेवानिवृत्त न्यायाधीशों की एक सदस्यीय जांच आयोग का गठन करने का निर्णय इसलिए लिया क्योंकि संबद्ध महाविद्यालयों के अभिलेखों की प्रामाणिकता पर गंभीर संदेह उठाए गए थे, साथ ही समिति की कार्यवाही एवं विश्वविद्यालयों की सिफारिशों पर भी। इस न्यायालय द्वारा गठित जांच आयोग ने सभी प्रभावित पक्षों को अपने मामले आयोग के समक्ष रखने का अवसर दिया था। कुछ पक्षों एवं व्यक्तियों ने आयोग के समक्ष इस अवसर का लाभ उठाया।

जांच आयोग की प्रतिवेदन पर अधिकांश आपत्तियां राज्य द्वारा गठित विभिन्न समितियों की रिपोर्टें एवं विश्वविद्यालयों की सिफारिशों पर आधारित हैं। इसके बाद, हमने एक जांच आयोग गठित किया जिसने अपनी प्रतिवेदन दी है। इसलिए, विभिन्न समितियों की रिपोर्टें एवं विश्वविद्यालयों की सिफारिशों के आधार पर आपत्तिकर्ताओं के पक्ष में कोई राहत या निर्देश देना संभव नहीं है। हमने अब संबंधित विश्वविद्यालयों को निर्देश दिया है कि वे अपने-अपने अधिकार क्षेत्र में आने वाले महाविद्यालयों के संबंध में, जांच आयोग की प्रतिवेदन एवं हमारे निर्णय के आलोक में, घटक महाविद्यालयों में विलय के औपचारिक आदेश जारी करें।

कुछ लिखित आपत्तियों में आयोग की प्रतिवेदन में कर्मचारियों के नामों एवं विवरणों में कुछ त्रुटियों की ओर इशारा किया गया है। प्रभावित कर्मचारी आयोग की प्रतिवेदन में ऐसी त्रुटियों को संबंधित विश्वविद्यालय के ध्यान में ला सकते हैं। विश्वविद्यालयों को उपरोक्त सीमित उद्देश्य के लिए अभिलेखों की जांच एवं सत्यापन करने एवं केवल कर्मचारियों के नामों एवं विवरणों के संबंध में आवश्यक सुधारों के साथ आयोग की प्रतिवेदन पर भरोसा करने की छूट होगी।

इस निर्णय एवं विश्वविद्यालय को दिए गए निर्देशों के मद्देनजर, जांच आयोग की प्रतिवेदन के आधार पर अंतिम निर्णय लेने के लिए, सभी पक्षकार बनने के लिए आवेदन एवं जांच प्रतिवेदन पर दायर की गई आपत्तियां अस्वीकार की जाती हैं। व्यक्तिगत कर्मचारियों के संबंध में अंतिम निर्णय विश्वविद्यालय को ही लेना है। इसी कारण से, अपील लंबित रहने के दौरान कुछ निर्देशों की मांग करने वाले अंतरिम आवेदनों एवं पहले दिए गए आदेशों में संशोधन के लिए किसी एवं आदेश की आवश्यकता नहीं है। अन्य अंतरिम आवेदनों के लिए भी किसी एवं निर्देश या आदेश की आवश्यकता नहीं है। वे सभी निपटाए जा चुके हैं।

निष्कर्ष :

1. उच्च न्यायालय का निर्णय, धारा 4(1)(14) एवं धारा 35 के प्रावधानों पर की गई व्याख्या के संबंध में, एवं उसमें अनुच्छेद 24 से 26 में दिए गए निर्देशों के संबंध में, एतद्वारा ऊपर बताए गए कारणों से पुष्टि की जाती है।
2. माननीय न्यायमूर्ति एस. सी. अग्रवाल [सेवानिवृत्त] की अध्यक्षता में गठित जांच आयोग की प्रतिवेदन स्वीकार की जाती है एवं उक्त प्रतिवेदन के विरुद्ध दायर सभी आपत्तियां खारिज की जाती हैं।
3. सूची संख्या (i) में चिन्हित एवं नामित विभिन्न संबद्ध महाविद्यालयों के कर्मचारियों को स्वीकृत पदों पर नियुक्त किया जाएगा एवं इस आशय का औपचारिक आदेश संबंधित विश्वविद्यालयों द्वारा जारी किया जाएगा।
4. विश्वविद्यालय अधिनियम की धारा 4(1)(14) के तहत आयोग की प्रतिवेदन की सूची संख्या (ii) में नामित नियुक्तियों के समायोजन के मामले में निर्णय लेंगे, जो उन पदों के लिए नियुक्तियां हैं जिनके लिए विश्वविद्यालयों द्वारा राज्य को कट-ऑफ तिथि तक सिफारिशें भेजी गई थीं, राज्य सरकार के दिनांक 19.8.1986 के पत्र में दिए गए निर्णय के अनुसार, जिसके बाद दिनांक 25.08.1986 एवं 12.06.1987 के पत्र भेजे गए।

जांच आयोग की प्रतिवेदन की सूची संख्या (ii) में नामित नियुक्तियों के समायोजन के प्रश्न पर विचार करते समय, संबंधित विश्वविद्यालय जांच आयोग की प्रतिवेदन की सामग्री एवं इस न्यायालय के वर्तमान निर्णय पर भरोसा करेंगे।

5. सूची संख्या (iii) में उल्लिखित नियुक्त व्यक्ति, जो ऐसे पदों पर नियुक्त हैं जिनके लिए विश्वविद्यालयों द्वारा राज्य सरकार को कट-ऑफ तिथि के बाद सिफारिशें भेजी गई थीं या जिन पदों पर कार्यरत हैं जिनके लिए राज्य सरकार के अनुमोदन हेतु कोई सिफारिशें नहीं भेजी गई थीं, उन्हें आमेलन के लिए विचार किए जाने का कोई अधिकार नहीं है - चाहे उनके मामलों में अनुमोदन हेतु सिफारिशें न भेजने के मामले में आकस्मिक परिस्थितियाँ हों या अन्यथा। सूची संख्या (iii) के संबंध में जांच आयोग की नकारात्मक प्रतिवेदन स्वीकार की जाती है एवं विश्वविद्यालयों को निर्देश दिया जाता है कि सूची संख्या (iii) में नामित सभी नियुक्तियों को समायोजन के लिए विचार से बाहर रखा जाए।
6. जाँच आयोग की प्रतिवेदन पर कर्मचारियों एवं व्यक्तियों के संघों द्वारा हमारे समक्ष बड़ी संख्या में आपत्तियाँ दर्ज की गई हैं, जो कथित तौर पर उन पदों के लिए निर्धारित योग्यताओं के अभाव से संबंधित हैं जिन पर वे कार्यरत हैं। उन सभी आपत्तिकर्ताओं को जाँच आयोग की प्रतिवेदन में शामिल करने की अनुशंसा नहीं की गई है। प्रत्येक कर्मचारी की योग्यता एवं शिक्षण एवं गैर-शिक्षण पदों के लिए योग्यता निर्धारित करने वाले प्रासंगिक समय पर लागू संबंधित कानून को ध्यान में रखते हुए, विश्वविद्यालयों द्वारा व्यक्तिगत मामलों में निर्णय, न्यायमूर्ति अग्रवाल आयोग की प्रतिवेदन के निष्कर्षों एवं ऊपर बताई गई कानूनी स्थिति के आलोक में लिया जाएगा।

संबंधित विश्वविद्यालय अब संबद्ध महाविद्यालयों के कर्मचारियों (शिक्षण एवं गैर-शिक्षण) के समायोजन की प्रक्रिया को हमारे निर्णय में ऊपर बताए गए तरीके एवं सीमा तक चार महीने की अवधि के भीतर पूरा करेंगे। यह प्रक्रिया इस आदेश की प्रति प्राप्त होने/प्रस्तुत किए जाने की तिथि से शुरू होगी।

बड़ी संख्या में फाइलों की जाँच, बड़ी संख्या में कर्मचारियों एवं उनके संगठनों के साथ-साथ संबंधित अधिकारियों की सुनवाई एवं इस न्यायालय को इन मामलों का निर्णय लेने में सुविधा प्रदान करने के लिए एक विस्तृत प्रतिवेदन तैयार करने एवं प्रस्तुत करने का कठिन कार्य, न्यायमूर्ति एस. सी. अग्रवाल [सेवानिवृत्त] द्वारा एक सदस्यीय जाँच आयोग के रूप में उचित समय के भीतर पूरा किया गया। इस मामले को समाप्त करने से पहले, हम आयोग की बहुमूल्य सेवाओं के लिए आभार व्यक्त करते हैं।

परिणामस्वरूप, अपील, उससे संबंधित विशेष अनुमति याचिका एवं अवमानना याचिकाएँ, सभी खारिज कर दी जाती हैं। पक्षकार के रूप में शामिल किए जाने के लिए आवेदन, हस्तक्षेप की मांग करने वाले आवेदन एवं जांच आयोग की प्रतिवेदन पर आपत्ति उठाने एवं निर्देश मांगने वाले अन्य आवेदन, सभी अस्वीकृत कर दिए जाते हैं।

इन परिस्थितियों में, हम पक्षों को इस न्यायालय में हुए अपने-अपने खर्चों को वहन करने के लिए बाध्य करते हैं।

बी.बी.बी

अपील, संबंधित विशेष अनुमति याचिका एवं
अवमानना याचिका खारिज कर दी गई।

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है एवं अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नहीं किया जा सकता। समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।